खंड 4

आर्थिक समाजशास्त्र में समकालीन समस्याएं

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 12 सामाजिक विकास*

संरचना

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 सामाजिक विकास की प्रकृति और अर्थ

12.3 सामाजिक विकास की मौजूदा धारणाएं

- 12.3.1 तीन दुनियाओं का विकास
- 12.3.2 विकास के सामाजिक–सांस्कृतिक आयाम
- 12.3.3 सामाजिक विकास के दृष्टिकोण

12.4 आजादी के बाद भारत में विकास के अनुभव

- 12.4.1 समाजवादी पथ और मिश्रित अर्थव्यवस्था
- 12.4.2 खंड आधारित विकास
- 12.4.3 सामुदायिक विकास और सहकारी आंदोलन
- 12.4.4 लक्ष्य आधारित सामूहिक योजना

12.5 सारांश

12.6 संदर्भ

12.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

12.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप पढ़ेंगे –

- सामाजिक विकास की अवधारणा तथा उसकी प्रकृति की व्याख्या;
- सामाजिक विकास के मौजूदा विचारों का वर्णन; और
- विकास के भारतीय अनुभवों का लेखा–जोखा।

12.1 प्रस्तावना

इकाई 11 में अर्थव्यवस्था तथा उत्पादन की सामाजिक प्रणाली, तथा खपत संबंधी सामाजिक परिदृश्यों की जटिल प्रकृति के बारे में बताया गया। इस इकाई में सामाजिक विकास की व्याख्या की जायेगी। इन दिनों सामाजिक परिवर्तनों, खासकर जो वांछित हैं, नियोजित, निर्देशित तथा समाज को प्रेरित करने वाले हैं, उनके लिए इस शब्दावली का प्रयोग किया जाता है।

सामाजिक विकास की अवधारणा को समझने के लिए वर्ष के दौरान परिभाषित व पुनर्परिभाषित – विकास के समाजशास्त्र को समझना जरूरी है। पहले इस इकाई में

* यह इकाई बी.डी.पी., ईएसओ–11, इकाई 34 से अंगीकृत है।

समाज की व्यापक प्रकृति तथा विकास की अवधारणा के बारे में बताया जायेगा। सामाजिक विकास पर मौजूदा दौर के विचारों का वर्णन किया जायेगा, जिनमें विकास के तीन दुनिया तथा सामाजिक विकास के कुछ आधुनिक दृष्टिकोणों से अवगत कराया जायेगा। अंत में भारत सहित अन्य सभी देशों में अपनाए जाने वाले विकास के मिले–जुले रास्तों पर विचार किया जायेगा।

12.2 सामाजिक विकास की प्रकृति तथा अर्थ

विकास एक व्यापक अवधारणा है। यद्यपि विकास और परिवर्तन अंतर्संबंधित हैं, परन्तु विकास परिवर्तन से अलग प्रकार की प्रक्रिया है। परिवर्तन का मूल्यों से संबंध नहीं होता, परन्तु विकास एक सकारात्मक अवधारणा है। विकास एक ऐसा परिवर्तन है जिसे हम चाहते हैं। सभी प्रकार के परिवर्तन विकास की प्रक्रिया के अंतर्गत नहीं आते। इस प्रकार विकास एक विशेष अवधारणा है।

दूसरी बात यह है कि हमें विकास की आर्थिक तथा समाजशास्त्रीय धारणाओं के बीच के अंतर को समझना चाहिए। इस इकाई को पढ़ने से यह अंतर स्पष्ट समझ आ जायेगा। जब हम सामाजिक विकास की बात करते हैं तो हमारा अभिप्रायः विकास की प्रक्रिया के सामाजिक पक्ष से होता है। व्यापक संदर्भ में सामाजिक विकास का मतलब है – व्यक्तियों और समाज का सर्वांगीण परिवर्तन जिसमें हर व्यक्ति को नैतिक सामाजिक तथा भौतिक रूप से समृद्ध होने के अवसर मिलते हैं। समतापूर्वक विकास वांछित लक्ष्य होता है, परन्तु यह आदर्श बनकर ही रह जाता है। विकास के प्रयत्नों के बावजूद विकास के विभिन्न आयामों में विषमताएं बनी रहती हैं, और समाजों, क्षेत्रों तथा समूहों के बीच की खाई चौड़ी होती चली जाती है। विभिन्न क्षेत्रों या देशों के बीच तुलना करें तो विभिन्नताएं दिखाई पड़ती हैं।

इन तुलनाओं के परिणामस्वरूप प्रति व्यक्ति आय, सकल घरेलू उत्पाद, जीवन–स्तर तथा तकनीकी विकास की दृष्टि से आर्थिक संदर्भ में विकासशीलता की धारणा सामने आती है। अधिक और कम विकास के अनेक तरह के रूप समाज में देखने को मिलते हैं। इनमें सबसे अधिक घातक यह है कि औद्योगिक क्षमता की वृद्धि सामाजिक उपयोगिकता पर प्रहार करती है। इसका अर्थ यह है कि देश जो अपनी जनसंख्या की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये पर्याप्त उत्पादन नहीं कर पाते में विकासशील होते हैं, तथा वे देश जो अपनी जरूरतों से ज्यादा उत्पादन करते हैं उन्हें अति विकसित देश कहा जाता है। अत्यधिक विकसित देशों में अमेरिका का नाम सबसे पहले आता है तथा विकासशील देशों की श्रेणी में एशिया तथा अफ्रीका के अनेक देश आते हैं।

यद्यपि किसी देश को विकासशील की श्रेणी में रखना तथा किसी को अत्यधिक विकसित देश कहना विवादास्पद लगता है। सच तो यह है कि अविकसित देश के रूप में किसी देश को पहचान देना स्वीकार्य नहीं है, ऐसे में आर्थिक रूप से कम विकसित देशों की एक श्रेणी बनती है जिसमें भारत का नाम शामिल किया जा सकता है। यह देश अपने आपको सामाजिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से संपन्न और विकसित मानते हैं। वे अपने आपको अविकसित देश के स्थान पर विकासशील देश कहलाया जाना ज्यादा पसंद करते हैं।

दुनिया के देशों को विकसित तथा विकासशील वर्गीकरण के पीछे एक महत्वपूर्ण विचार यह है कि विकसित देश विकास के मामलों में विकासशील देशों के लिये

प्रतिमान बन जाते हैं। विकासशील देश अपने आपको विकसित करने के लिए विकसित देशों की आर्थिक प्रणालियों तथा प्रौद्योगिकियों को अपनाने लगते हैं। इस वर्गीकरण की महत्वपूर्ण उपलब्धि यह है कि विकासशील देश प्रौद्योगिकी, कौशल तथा आर्थिक सहायता के लिये विकसित देशों पर निर्भर हो जाते हैं। ऐसे में विकसित देश विकासशील देशों की सहायता तो करते हैं, परन्तु उनका शोषण भी करने लग जाते हैं। इसे विकास का निर्भरता का सिद्धांत कहा जाता है। जब विकासशील देश यह पाते हैं कि विकसित देश उनका शोषण कर रहे हैं तो वे आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने का प्रयास करने लगते हैं। आर्थिक निर्भरता से आर्थिक स्वाबलम्बन की ओर बढ़ने की प्रवृत्ति विकास का महत्वपूर्ण संकेत है। जितना अधिक कोई आत्मनिर्भर होगा उतना ही अधिक वह विकास कर पायेगा। आत्मनिर्भरता की स्थिति प्राप्त करने के लिये किये गये प्रयासों की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि यह होता है कि विकासशील देश विकसित देशों से उत्पाद खरीदना धीरे–धीरे बन्द कर देते हैं और अपने देश में उत्पादन में वृद्धि करने लगते हैं।

बोध प्रश्न 1

1) परिवर्तन और विकास में अंतर बताइये। चार पंक्तियों में उत्तर दीजिये।

.....

.....

.....

.....

.....

2) विकास की निर्भरता का सिद्धांत क्या है? पांच पंक्तियों में उत्तर दीजिये।

.....

.....

.....

.....

.....

12.3 सामाजिक विकास की मौजूदा धारणायें

विकास के बारे में समकालीन सामाजिक संदर्भों की व्याख्या करने के लिये हम ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित कुछ विचारों को प्रस्तुत करना चाहेंगे जो विकास के सामाजिक–सांस्कृतिक आयामों के बारे में हैं। विकास के बारे में इन प्रमुख संदर्भों की जांच करने से पहले विकास की तीन दुनियाओं के बारे में जान लेना जरूरी है। क्योंकि यह स्थिति सोवियत संघ के टूटने से पहले दुनिया में मौजूदा थी। 20वीं शताब्दी मध्य से पहले के समाजशास्त्रियों का इसमें महत्वपूर्ण योगदान है। इससे पहले दुनिया दो खेमों में विभाजित थी – एक ओर अमेरिका और उसके समर्थक पूंजीवादी अर्थव्यवस्था वाली दुनिया थी, दूसरी ओर सोवियत संघ उसके समर्थकों की साम्यवादी, समाजवादी सोच वाली दुनिया 20वीं शताब्दी उत्तरार्ध में सोवियत संघ के टूट जाने के बाद दुनिया के दोनों खेमों के बीच 'शीतयुद्ध' का दौर समाप्त हो गया,

और पूरी दुनिया एक ध्रुवीय बनकर रह गई और पूंजीवादी अर्थव्यवस्था का प्रमुख पक्षधर अमेरिका सबसे अधिकर शक्तिशाली देश के रूप में उभरा।

12.3.1 तीन दुनियाओं का विकास

पहली दुनिया में उत्तरी अमेरिका, पश्चिमी व दक्षिणी यूरोप के देश आते हैं। इस दुनिया के सभी देश पूंजीवादी अर्थव्यवस्था के समर्थक थे। दूसरी दुनिया में सोवियत संघ तथा पूर्वी यूरोप के देश जैसे पौलेंड, पूर्वी जर्मनी, हंगरी आदि। इन देशों में अब तब आते–आते अनेक सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन हुए हैं, और अब इनमें से कोई भी देश साम्यवादी खेमे का देश नहीं रह गया है। ये सभी देश समाजवादी अर्थव्यवस्था के समर्थक हुआ करते थे। एशिया, अफ्रीका तथा लातिन अमेरिका के कम विकसित या विकासशील कहे जाने वाले देश अपने आपको तीसरा दुनिया कहते थे और अब भी भारत सहित कुछ देश ऐसा ही मानते हैं।

तीसरी दुनिया के अधिकतर देशों को प्रति व्यक्ति आय कम है, साक्षरता दर भी कम है तथा बाल–मृत्युदर अधिक है। लगभग ये सभी देश कृषि आधारित अर्थव्यवस्था वाले हैं जहां व्यक्तियों की औसत आयु कम होती है, सामाजिक गतिशीलता को नीचा स्तर तथा ये परम्पराओं से अधिक जुड़े होते हैं। (आर. जे. एस्टेज, पृ. 92)। तीसरी दुनिया के देश पहली और दूसरी दुनिया के देशों से विशेष रूप से प्रभाव ग्रहण करते हैं। उनकी अपनी राष्ट्रीय नीतियां तथा विकास योजनाएं पहली व दूसरी दुनिया के देशों के विकास प्रतिमानों को आधार बनाते हुए तैयार की जाती हैं और आर्थिक विकास पर उनका ज्यादा जोर रहता है।

i) पहली दुनिया के विकास का पूंजीवादी प्रतिमान

इस पूंजीवादी विकास प्रतिमान की निम्नलिखित विशेषताएं है :

अ) संपत्ति तथा उत्पादन के संसाधनों पर निजी स्वामित्व।

ब) निजी उद्यमों/कंपनियों के माध्यम से आर्थिक गतिविधियों को प्रोत्साहन।

स) निजी उद्यमों में राज्य का कम से निर्देशन एवं नियंत्रण। इस प्रकार पूंजीवादी प्रतिमान खुली अर्थव्यवस्था के लक्षण दर्शाता है जो प्रतिस्पर्धा से निर्देशित होते हैं।

ii) दूसरी दुनिया का विकास का समाजवादी प्रतिमान

दूसरी दुनिया के देशों ने विकास का जो समाजवादी प्रतिमान अपनाया था, वह पूंजीवादी विकास प्रतिमान का विरोधी था। विरोध का सबसे बड़ा आधार यह है कि समाजवादी विकास प्रतिमान वाले देशों में संपत्ति तथा उत्पादन के संसाधनों पर, सार्वजनिक उद्यमों तथा आर्थिक गतिविधियों पर राज्य का स्वामित्व होता है, इस प्रकार समाजवादी प्रतिमान में अर्थव्यवस्था विनियमित होती है।

पूंजीवादी अर्थव्यवस्था पर पहला आरोप यह लगाया जाता है कि यह प्रतिमान राज्य के विनियमन की कम से कम अनुमति देता है। इसकी आर्थिक प्रणाली में शोषण शामिल हो जाता है क्योंकि श्रमिक वर्ग (सर्वहारा) का जितना परिश्रम करता है, उसके अनुसार उसे लाभ में भागीदारी नहीं मिल पाती। पूंजीपति को राष्ट्र के संसाधनों में बड़ा हिस्सा

प्राप्त होता है। इस प्रकार पूंजीवाद असमानता लाता है, और इस व्यवस्था में कुछ लोग बहुत अमीर हो जाते हैं और बहुत बड़ी संख्या में लोग गरीब हो जाते हैं।

इसलिए पूंजीवादी प्रतिमान पर शोषक होने और असमानतावादी होने का आरोप लगाया जाता है। दूसरी ओर इसके ठीक विपरीत समाजवादी प्रतिमान को आदर्श रूप से शोषण मुक्त तथा समतावादी माना जाता है। निजी स्वामित्व तथा राज्य के नियंत्रण से बाहर होने के कारण पूंजीवादी प्रतिमान कमजोर आर्थिक स्थिति वाले तथा पिछड़े लोगों के शोषण का रास्ता खोलता है जिससे आय की असमानता को बढ़ावा मिलता है। परन्तु समाजवादी शासन व्यवस्था में संपत्ति के निजी स्वामित्व की अनुमति नहीं होती और यह सुदृढ़ विश्वास होता है कि शोषण और असमानता की स्थिति उत्पन्न नहीं होगी।

यद्यपि ऐतिहासिक घटनाओं ने इस विश्वास को गलत साबित कर दिया है; समाजवादी अर्थव्यवस्था का दुनिया का सबसे आदर्श देश सोवियत संघ। इस व्यवस्था को लम्बें समय तक कायम नहीं रख सका। 'ग्लास्नॉस्त' तथा 'पेरेस्त्रोइका' के दौर में सोवियत संघ के तत्कालीन प्रधानमंत्री गोर्बाचैव ने 1980 के दशक में साम्यवादी राजनैतिक व सामाजिक संरचना को ध्वस्त कर दिया जिसके परिणामस्वरूप सोवियत संघ में शामिल अनेक छोटे–छोटे देश अलग हो गए और समाजवाद का स्थान पूंजीवाद ने ले लिया। यद्यपि चीन में समाजवादी सामाजिक राजनैतिक व्यवस्था बनी रही और चीन के अनुसार वह अब तक जारी है।

दोनों प्रतिमानों की अवधारणा में भी अंतर है। पूंजीवादी प्रतिमान आर्थिक विकास से प्राप्त होने वाले मुनाफे के समान वितरण की तुलना में आर्थिक विकास पर अधिक जोर देता है।

समाजवादी प्रतिमान संसाधनों के निर्माण तथा उत्पादन से होने वाली आय के समान वितरण दोनों पर सामन रूप से जोर देता है, कुछ इस प्रकार से कि सामाजिक न्याय को अधिक से अधिक सुनिश्चित किया जा सके। समाजवादी प्रतिमान व्यक्तिगत पहलों तथा उपभोक्ता की इच्छाओं के लिए अधिक गुंजाइश नहीं छोड़ता।

इस व्याख्या के आधार पर इन दोनों प्रतिमानों के बीच एक अंतर और संज्ञान में आता है। पूंजीवादी प्रतिमान में मजदूरों व पूंजीपतियों के बीच हितों को लेकर टकराव की संभावना अधिक नहीं रहती। पूंजीवाद की दृष्टि में दोनों वर्ग एक दूसरे के पूरक के रूप में काम करते हैं, और अपनी भूमिकाओं में वे एक दूसरे पर निर्भर दिखाई पड़ते हैं। समाज के नियम, खासकर संपत्ति के स्वामित्व तथा आय के वितरण के बारे में, सहमति पर आधारित होते हैं।

इसके ठीक विपरीत समाजवादी प्रतिमान श्रमिकों तथा पूंजीपतियों के बीच वर्ग संघर्ष को अनिवार्य रूप में अवस्थित मानकर चलता है। समाजवादी प्रतिमान के अनुसार नियम सहमति पर आधारित नहीं होते, बल्कि ये धनी या पूंजीपति वर्ग द्वारा कमजोर वर्ग (श्रमिक वर्ग) पर थोपे जाते हैं। इससे अमीरों द्वारा गरीबों के शोषण में वृद्धि होती है। जिसका परिणाम होता है वर्गीय टकराव और शोषित वर्ग क्रांति का उद्घोष करता है जिसका उद्देश्य होता है सम्पूर्ण व्यवस्था परिवर्तन।

इस प्रकार पूंजीवादी प्रतिमान एक तरह से कार्यानुरूप अथवा सहमति जन्य होता है तथा समाजवादी प्रतिमान एक तरह से टकराव उग्रता और क्रांति मूलक है। व्यवहार

में, जैसा कि कुछ शोधकर्त्ताओं ने पाया है, ये दोनों प्रतिमान परिवर्तन के दौर में प्रवेश कर चुके हैं। जैसे अमेरिका में इस समय निजी आर्थिक उद्यमों पर राज्य का निर्देशन बढ़ रहा है तथा रूस में निजी उद्यमों को आर्थिक सहायता देने में रूचि बढ़ी है। आय असमानताएं तथा राजनैतिक व आर्थिक व्यवस्थाओं में परिवर्तन का विरोध दोनों दुनियाओं में दिखाई पड़ता है।

बॉक्स 12.0

तीसरी दुनिया का विचार यूरोप में उत्पन्न हुआ था। 1940 में इसे फ्रांस में तलाशा जा सकता है, जब राजनैतिक दलों की व्याख्या 'डि गॉलीज़ रेजम्बलमेंट डेस प्युपल फ्रेंसाइज एण्ड द फोर्थ रिपब्लिक (सेफायर, 1978) के रूप में की गई थी। दूसरे लेखक क्लीजेम (1978) ने तीसरी दुनिया के विचार की तुलना 'तृतीय एस्टेट' से की थी। उभरता हुआ परन्तु प्रतिनिधित्व रहति गुर्जुआ – फ्रांसीसी क्रांति, 1789 के दौरान। 1979 में बुल्फ–फिलिप्स ने फ्रांसीसी विद्वान एल्फर्ड सेवी को 1962 में 'तीसरी दुनिया' शब्द के इस्तेमाल का श्रेय दिया था।

हालांकि विकास की दुनिया शब्द का संबंध समाजशास्त्री लुइस इर्विंग हीरोविज से हैं। अपनी पुस्तक ''थ्री वर्रडस ऑफ डेवेलपमेंट : द थ्यौरी एण्ड प्रेक्टिलस ऑफ इंटरनेशनल स्ट्रेटफिकेशन (1972) में होरोविज के देशों के समूहों जिनके सामाजिक–आर्थिक विकास में समानताऐं थीं। उनकी पहचान सुनिश्चित करने के लिए अनेक मापदंडों का जिक्र किया था।

हाल के कुछ वर्षों में विकास की चौथी दुनिया की अवधारणा भी सामने आई है। इसे सबसे पहले मेन्यूल और पॉस्लन्स (1974), हेमेलियन और कार्ल (1974:13) ने चिन्हित किया था। उन्होंने इस अवधारणा को कमजोर, दबे–पिचे तथा निर्वाचित के लिए इस्तेमाल किया था। उनके अनुसार विकास की अन्य सभी दुनियाओं – जैसे, पहली, दूसरी तथा तीसरी दुनिया में भी ऐसे लोग होते हैं जिनकी विकास अवस्था चौथी दुनिया के लोगों विकास अवस्था जैसी ही होती है। परन्तु आमतौर पर यही माना जाता है कि पहली दुनिया के लोग विकसित बाजारों वाली अर्थव्यवस्थाओं वाले होते हैं (डीएमई) दूसरी दुनिया के देश ईस्टर्न ट्रेडिंग एरियास (ईटीएज़) तथा तीसरी दुनिया के देश ''विकासशील देश'' कहलाते हैं। चौथी दुनिया के देश ''कम विकासशील देश (एलडीसी) कहलाते हैं।

iii) तीसरी दुनिया का विकास

तीसरी दुनिया के देशों ने विकास का जो प्रतिमान स्वीकार किया था। उसकी पूरी तरह परिभाषित करना कठिन है, क्योंकि इतिहासकारों का मानना है कि अपने ऐतिहासिक व सामाजिक–सांस्कृतिक परिवेशों की विविधता के कारण इन देशों के विकास प्रतिमानों में अनेक प्रकार की विभिन्नताएं थीं। फिर भी इनमें से उन विशेषताओं का विवरण नीचे दिया जा रहा है, जो तीसरी दुनिया के सभी देशों के विकास प्रतिमानों में सामान्य थीं:

अ) विकसित देशों की तुलना में आर्थिक तथा प्रौद्योगिक दृष्टि से ये देश कम विकसित थे।

ब) उनकी विकास प्रक्रिया में सामाजिक नियोजन प्रमुख रूप से मौजूद रहा। उनकी विकास योजनाएं केवल आर्थिक सरोकारी से ही संबंधित नहीं थीं, खासकर गरीबी उन्मूलन, परन्तु राष्ट्र निर्माण व राष्ट्रीय संस्कृति तथा सामाजिक बदलावों को भी केंद्र में रखकर बनाई गई थीं।

स) ये देश प्रौद्योगिकी तथा आर्थिक सहायता प्राप्त करने के लिए विकसित देशों पर निर्भर थे। विकसित देशों ने इन्हें आर्थिक सहयोग तो दिया परन्तु साथ ही उन्होंने इन देशों पर राजनैतिक प्रभाव भी लगातार बढ़ाया। विकासशील देशों को अपने प्रभाव में लेने की एक बढ़ी बजह यह थी कि विकसित देशों की। विश्व स्तरीय सुरक्षा रणनीति सदैव विकासशील देशों पर हावी रही।

वास्तव में तीसरी दुनिया का विचार विकासशील देशों में इस बात को लेकर जागृति उत्पन्न होने से संबंधित है कि आर्थिक तथा तकनीकी सहायता करने की आढ़ में विकसित देश उनका शोषण करते हैं। कुछ देश इस तरह के शोषण के प्रति पहले ही सचेत हो गये थे, परन्तु कुछ ऐसे देश भी हैं जो इस बात को तब समझ पाये जब विकसित देशों ने उनका कोई बड़ा नुकसान कर दिया। जैसे अमेरिका की वियतनाम में भूमिका तथा अफगानिस्तान में सोवियत संघ की भूमिका। सामाजिक विश्लेषण की सहयोग के लिए प्रशंसा करने तथा विकासशील देशों में विकसित देशों के ताकत के खेल का खुलासा करने में विशेष भूमिका रही।

पहली, दूसरी तथा तीसरी दुनिया के बारे में जानकारी देने के बाद, अब दुनिया के सभी देशों में विकास की अवधारणाओं पर विचार किया जायेगा।

गतिविधि 1

अपने दादाजी की पीढ़ी के पांच व्यक्तियों का साक्षात्कार करिए। उनसे प्रथम तथा द्वितीय विश्व युद्ध के बारे में जानकारी प्राप्त कीजिए। जानिए कि भारत के लोगों पर इन युद्धों का क्या प्रभाव पड़ा था। ''प्रथम व द्वितीय विश्व युद्धों का भारती समाज पर प्रभाव'' नामक विषय पर एक पृष्ठ का आलेख तैयार कीजिए। अन्य छात्रों के आलेख से अपने आलेख की तुलना कीजिए।

बोध प्रश्न 2

1) दो ऐसे देशों के नाम बताइये, जहां विकास का पूंजीवादी प्रतिमान लागू हैं।

.....

.....

.....

.....

.....

2) रिक्त स्थान भरिए –

अ) पहली दुनिया की प्रमुख विशेषता है विकास का ..... प्रतिमान .....

ब) दूसरी दुनिया के देशों ने विकास का ..... प्रतिमान स्वीकार किया था।

3) ऐसे देशों की सूची तैयार कीजिये जिन्हें तीसरी दुनिया के देश कहा जाता है। तीन पंक्तियों में उत्तर दीजिये।

.....

.....

.....

.....

.....

4) उन तीन सामान्य विशेषताओं का वर्णन कीजिये जो तीसरी दुनिया के देशों अथवा विकासशील देशों में मौजूद रही हैं। आठ पंक्तियों में उत्तर दीजिये।

.....

.....

.....

.....

.....

12.3.2 विकास के सामाजिक–सांस्कृतिक आयाम

हाल के कुछ वर्षों में विकास की धारणा के अनेक आयाम सामने आये हैं। पहला यह है कि आर्थिक विकास समाज के सभी वर्गों के विकास की प्रक्रिया को सुनिश्चित कर देता है। यह धारणा सही साबित नहीं हुई। यदि आर्थिक विकास केवल एक वर्ग के लोगों का होता है तो इससे समाज के सभी वर्गों के विकास की गति तेज नहीं होती। इसी प्रकार विकसित देशों के आर्थिक विकास कर लेने से उनकी सारी समस्याओं का समाधान नहीं हो पाया है। इसीलिये अब यह महसूस किया जा रहा है कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति के जीवन की गुणवत्ता में सुधार ही एक मात्र वह उपलब्धि है जो मानव समाज का अंतिम लक्ष्य है, और इसे मात्र आर्थिक विकास अथवा पूंजी के एकत्रीकरण द्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता।

समाजशास्त्री अब यह विश्वास करते हैं कि मनुष्यों में खुशहाली लाने के लिये विकास के सामाजिक–सांस्कृतिक आयामों पर अधिक जोर देना होगा। सामाजिक विकास को गति को तेज करने के लिये निम्नलिखित स्थितियों का होना आवश्यक है।

अ) रोटी कपड़ा और मकान से संबंधित मूलवर्ती आवश्यतायें सभी की पूरी हों।

ब) सभी को आवश्यक सुविधायें जैसे बिजली, यातायात, पानी तथा संपर्क सुविधायें पर्याप्त रूप से उपलब्ध हों।

स) पर्यावरण प्रदूषण समाप्त हो तथा सभी के पौष्टिक भोजन और चिकित्सा संबंधी सुविधायें उपलब्ध हो और मानसिक तथा शारीरिक रूप से सभी स्वस्थ हों।

द) सभी के आर्थिक हित जैसे रोजगार के अवसरों की उपलब्धि तथा उच्च जीवन स्तर की प्राप्ति।

घ) सभी मनुष्यों का समुचित विकास हो जैसे – सबको अच्छी शिक्षा मिले, सबका नैतिक विकास हो तथा सभी सक्रिय मनुष्य बनें।

न) सामाजिक राजनैतिक तथा आर्थिक प्रक्रियाओं में सभी लोगों की भागीदारी तथा प्रभावी सामाजिक संस्थानों द्वारा सामाजिक एकीकरण की स्थापना हो।

प) आर्थिक सामाजिक तथा राजनैतिक संसाधनों में सभी की लगभग समान भागीदारी हो। संसाधनों की उपलब्धि की दृष्टि से असमानता कम से कम हों।

विकास की समग्र प्रक्रिया पर विचार करते समय कुछ समाजशास्त्री मनुष्यों के मनोवैज्ञानिक, सामाजिक तथा नैतिक आयमों पर विशेष रूप से जोर देते हैं। वे विकास को शारीरिक, मनोवैज्ञानिक तथा सांस्कृतिक आदि जीवन के सभी क्षेत्रों की गुणवत्ता के रूप में देखते हैं। वे इस बात पर जोर देते हैं कि ये सभी आयाम एक–दूसरे को अत्यधिक घनिष्टता से जुड़े हैं। उदाहरण के लिए जीवन का मनोवैज्ञानिक गुणवत्ता में सुधार के साथ ही जीवन में संतुष्टि का विचार जुड़ा है जिसमें सकारात्मक मानसिक स्वास्थ्य सम्मिलित है। मानसिक स्वास्थ्य का सकारात्मक बना रहना इस बात पर निर्भर करता है कि कोई मनुष्य अपने भौतिक व अभौतिक जीवन–उद्देश्यों तथा समाज के यांत्रिक तथा आंतरिक मूल्यों के बीच प्रभावी संतुलन किस प्रकार कायम रखता है।

सामाजिक नियंत्रण, परिवर्तन और विकास

यह व्यक्तिपरक आयाम जीवन की सामाजिक गुणवत्ता से बहुत गहराई से जुड़ा है। सामाजिक गुणवत्ता में सुधार का अर्थ है पारिवारिक स्थिरता में वृद्धि, पारस्परिक आत्मीयता तथा सामाजिक अखंडता में वृद्धि जीवन की सांस्कृतिक गुणवत्ता में वृद्धि का अर्थ है नैतिक आयामों का उत्थान। दूसरों की परवाह करना सामाजिक नैतिकता का सार है। उनका यह मानना है कि अनेक ऐसे विकसित समाज हैं जिनके सदस्य दूसरों की तनिक भी परवाह नहीं करते। इसीलिए ऐसे समाज को सही अर्थों में विकसित समाज नहीं माना जा सकता। (शर्मा, 1986 :20) इस प्रकार विकास की सामाजिक पहल ऐसी विकास प्रक्रिया को एक ऐसा परिवर्तित मानती है जो समाज को सामाजिक, सांस्कृतिक आधार–शीला को प्रभावित करें।

आधुनिक संदर्भ में विकास समूची व्यवस्था में सुनियोजित, व अभिप्रेरित गति का प्रतिनिधित्व करता है जिसका लक्ष्य होता है समाज के सभी अपेक्षित उद्देश्यों की साधना। आज हमें विकास के समाजशास्त्र से परिचित हैं। विकास का समाजशास्त्र दो दिशाओं में बढ़ता जा रहा है – आंतरिक संरचना के विश्लेषण और ऐतिहासिक जुड़ाव। इस क्षेत्र में हुए अध्ययन पर दृष्टिपात करें तो हमें सामाजिक विकास की निम्नलिखित पहले नज़र आती हैं।

12.3.3 सामाजिक विकास के दृष्टिकोण

सामाजिक विकास की पहल को दो आधारों पर देखा जा सकता है – (i) विकास की योजनाओं तथा संसाधनों का केंद्रीयकरण बनाम विकेंद्रीयकरण, (ii) विकास की इकाई, जैसे विकास के केन्द्र – व्यक्तिगत, सामूहिक, ग्राम स्तर आदि। प्रथम मापदण्ड दो दृष्टिकोणों को जन्म देता है – ऊपर से नीचे की ओर विकास तथा नीचे से ऊपर की ओर विकास। दूसरा मापदण्ड तीन दृष्टिकोणों को जन्म देता है – खण्डीय विकास, क्षेत्र आधारित विकास तथा लक्ष्य आधारित सामूहिक विकास। अब संक्षेप में इन पांचों दृष्टिकोणों पर विचार किया जायेगा।

i) ऊपर से विकास

ऊपर से होने वाले विकास का अर्थ यह है कि विकास की योजनाओं का निर्माण तथा उनका संचालन प्रशासन की केन्द्रीय अथवा शीर्ष संस्थाओं द्वारा किया जाता है। दूसरे शब्दों में केन्द्रीय संगठन विकास योजना की प्रकृति और दिशा तय करते हैं। योजनाओं का निर्माण करते हैं तथा उन्हें नागरिकों के विकास हेतु लागू करते हैं। उदाहरण के लिए राजधानी में बैठे मंत्री तथा उच्चाधिकारी ग्रामीण क्षेत्रों की समस्याओं को पूरी तरह समझे बिना उनके लिये राजधानी में बैठकर विकास योजनायें तैयार करते हैं।

सच्चाई यह है कि इस दृष्टिकोण से किये जाने वाले विकास को वे लोग समझ भी नहीं पाते जिनके लिये ये विकास योजनायें बनाई जाती हैं और न ही वे इन योजनाओं के संचालन में अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर पाते हैं। इसीलिये योजनाओं को बनाने वाले और उन्हें संचालित करने वाले विशेष रूप से जानकार लोगों को बाहर से बुलाना पड़ता है। इसलिए इस दृष्टिकोण से किया गया विकास आधारहीन माना जाता है। सत्ता के शीर्ष पर बैठे अभिजात वर्गीय लोग इस दृष्टिकोण से विकास योजनाऐं लागू करने का फैसला इसलिये लेते हैं क्योंकि उनमें उनके निहित स्वार्थ शामिल होते हैं। ऐसा करने से उन्हें समस्त संसाधनों पर नियंत्रण करने और अपने लाभों को केंद्र में रखकर काम करने को मौका मिल जाता है। जिन लोगों के लिए यह विकास योजनायें लागू की जाती हैं वे इन्हें इसलिये स्वीकार कर लेते हैं क्योंकि न तो उनके पास अपने पर्याप्त संसाधन होते हैं और न ही उनका सामुदायिक संसाधनों पर नियंत्रण होता हैं। इसका परिणाम यह होता है कि ऊपर से थोपी गई अधिकतर योजनायें वैसे परिणाम नहीं दे पातीं जैसी उनसे अपेक्षा होती है।

अधिकतर मामलों में यह होता है कि विकास धनराशि का एक बड़ा हिस्सा योजनायें लागू करने वाले, योजनाओं के जानकार तथा प्रशासन में बैठे लोग चट कर जाते हैं। सरकार अथवा बाहरी संस्थान जो भी इन योजनाओं का संचालन करते हैं वे प्रायः भ्रष्ट हो जाते हैं। इस दृष्टिकोण से किये जाने वाली विकसित योजनाओं के असफल होने का मुख्य कारण यह होता है कि इन योजनाओं में वे लोग शामिल नहीं होते जिनके हितों के लिए यह योजनायें बनाई जाती है। बल्कि ये लोग अपने आपको उपेक्षित महसूस करते हैं, इन्हीं कारणों से केन्द्रीय स्तर पर तथा नौकरशाहों द्वारा लागू की जाने वाली विकास योजनाओं के संचालन में पूरी तरह शीर्ष पर बैठे राजनैतिक तथा प्रशासनिक अधिकारियों का ही हाथ रहता है।

ii) नीचे से विकास

नीचे के स्तर पर विकास में विश्वास रखने वालों का यह मानना है कि वे उन लोगों की योग्यताओं और इरादों की ईमानदारी में विश्वास रखते हैं जिनके लिए विकास की आवश्यकता है। उन्हें अपनी समस्याओं को उठाने और उनका समाधान खोजने का अवसर दिया जाना चाहिये, उन्हीं लोगों को प्रशिक्षण दिया जाता है और अपनी सहायता स्वयं करने में सक्षम बनाया जाता है। विकास की योजनाओं को पूरा करने के लिये संसाधनों के इस्तेमाल का स्थानीय स्तर पर उन्हीं के प्रतिनिधियों के द्वारा फैसला लिया जाता है इसलिए इस दृष्टिकोण से

किये गये विकास की योजनाओं में विकेन्द्रीयकरण की भावना होती है तथा स्थानीय लोगों की भागीदारी अधिक होती है। जब योजना बनाने वाले निचले स्तर पर विकास के महत्व को महसूस करते हैं तब ही इस तरह के विकास की योजना बनाई जाती है।

जब योजना बनाने वाले निचले स्तर पर विकास के महत्व को महसूस करते हैं तब ही इस तरह के विकास की योजना बनाई जाती हैं लेकिन अक्सर यह देखा गया है कि अधिकतर योजनायें ऊपर से ही लागू की जाती है और इसीलिये निचले स्तर पर विकास करने वे प्रभावी साबित नहीं हो पातीं।

iii) खण्डीय विकास

विकास की इकाई के आधार पर, जैसाकि पहले बताया जा चुका है, विकास के तीन दृष्टिकोण होते हैं – खण्डीय स्तर पर विकास, क्षेत्रीय स्तर पर विकास और लक्ष्य आधारित सामूहिक विकास। खण्डीय आधार पर विकास का अर्थ है विकास की योजनाओं का अर्थव्यवस्था के एक खण्ड या विभाग जैसे – कृषि अथवा उद्योग। उदाहरण के लिये भारतीय योजनाकारों ने आजादी के बाद देश में उद्योगों के विकास की योजना बनाई। उद्योग स्थापित करने के लिये अथवा उद्योगों के विकास के लिये उन्होंने प्रौद्योगिकी विकसित करने अथवा उसे विदेशों से प्राप्त करने की योजना तैयार की। इसी उद्देश से देश में प्रौद्योगिकी शिक्षण एवं प्रशिक्षण पर विशेष रूप से जोर दिया गया। अनेक संस्थानों तथा महाविद्यालयों की स्थापना की गई। इसके लिए स्वतंत्र रूप से भी प्रयास किये गये तथा अमरिका, रूस तथा इंग्लैंड से सहयोग भी लिया गया।

दूसरी ओर उद्योगों जैसे – वस्त्र उद्योग, इस्पात तथा सीमेंट उद्योगों की स्थापना के लिये धन–राशि भी उपलब्ध कराई गई। आगे चलकर 1960 के दशक के आरंभिक वर्षों में देश के सामने खाद्यान्न का संकट भी उत्पन्न हुआ है, तब देश के योजनाकारों ने कृषि क्षेत्र में विशेष रूप से विकास करने की योजना बनाई। इस योजना के अंतर्गत अनेक कृषि विश्वविद्यालयों की स्थापना की गई, जिनमें विभिन्न प्रकार के उच्च पैदावार वाली फसलों के बीजों को विकसित करने तथा फसलों में लगने वाले कीड़ों को नष्ट करने के लिए कीटनाशकों का उत्पादन करने तथा फसल–प्रबंधन के उपकरणों तथा मशीनों के बारे में, जैसे थ्रैशर आदि को इस्तेमाल करने हेतु प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की गई। किसानों को अधिक पैदावार वाली खेती करने के लिए प्रोत्साहित करने तथा नई प्रौद्योगिकियों को इस्तेमाल करने के लिए तैयार करने जैसे प्रयास किये गये। आर्थिक सहायता देने के लिए किसानों को बैंकों से ऋण देने की व्यवस्था की गई। इस सबका परिणाम यह हुआ कि देश में हरित क्रांति आ गई और देश खाद्यान्न में प्रायः आत्म–निर्भर हो गया।

iv) क्षेत्र आधारित विकास

देश में सभी क्षेत्र समान रूप से विकसित नहीं है कुछ क्षेत्रों में अधिक विकास हुआ, कुछ अपेक्षाकृत कम विकसित हो पाये हैं। पिछड़े हुए तथा कम विकसित क्षेत्रों में सड़क मार्ग और रेल–मार्ग नहीं हैं। कहीं–कहीं तो बिजली भी नहीं पहुंच पाई है। कुछ क्षेत्र बाढ़ और सूखे की मार झेलने पर विवश हैं। जब विकास की योजनाएं क्षेत्र विशेष को केंद्र में रखकर बनाई जाती हैं, क्षेत्र विशेष को

आधार–भूत सुविधाएं प्रदान करने के उद्देश्य से योजनाएं बनाई जाती हैं, तब इसे क्षेत्रवार या क्षेत्र आधारित विकास कहा जाता है। भारत में 1974 में 'कमांड इंडिया डेवलपनेंट स्कीम' लागू की गई थी। इसका उद्देश्य कुछ खास क्षेत्रों में सिंचाई के संसाधनों का विकास करना था। यह क्षेत्र आधारित या क्षेत्रीय विकास के दृष्टिकोण को दर्शाता है।

v) लक्ष्य आधारित सामूहिक विकास

लक्ष्य आधारित सामूहिक विकास का दृष्टिकोण खास तरह के लोगों के विकास के लिए अपनाया जाता है। जैसे छोटे किसानों, महिलाओं तथा खेतों में काम करने वाले मजदूरों के लिए बनाई गई विकास योजनाएं – जैसे लघु कृषक विकास संस्था (एस एफ डी ए) तथा विद्यालयों तथा महाविद्यालयों में प्रवेश के लिए स्थानों का संरक्षण तथा रोजगार में अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के प्रत्याशियों के लिए आरक्षण एक खास समूह के विकास की योजनाओं के अंतर्गत आता है। किसी स्थान विशेष में जैसे गांव या शहर विशेष में रहने वाले लोगों के विकास की योजना एक अलग श्रेणी में आती है। इसे सामुदायिक विकास कहा जाता है। इस विकास योजना के अंतर्गत इन समुदायों के लोगों को शिक्षा, स्वास्थ्य, आर्थिक व सामाजिक महत्व की आधारभूत सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए विकास योजनाएं बनाने पर विशेष रूप से जोर दिया जाता है।

गतिविधि 2

अपने क्षेत्र के स्थानीय ब्लॉक के विकास अधिकारियों (बीडीओ) के कार्यालय में जाकर किसी एक अधिकारी या दो अधिकारियों के साक्षात्कार कीजिए जो उस क्षेत्र में की जा रही विकास की गतिविधियों में शामिल हों। वहाँ किस तरह की योजनाएं चलाई जा रही हैं और आपके क्षेत्र के विभिन्न समुदायों पर उनका क्या प्रभाव पड़ रहा है। ''सामाजिक विकास तथा उसमें सरकार की भूमिका'' पर एक रिपोर्ट तैयार कीजिए। अपने अध्ययन केंद्र पर जाकर अन्य छात्रों की रिपोर्ट से अपनी रिपोर्ट की तुलना कीजिए तथा अपने शैक्षिक परामर्शक के साथ इस पर चर्चा कीजिए।

बोध प्रश्न 3

1) आर्थिक विकास, समाज के सभी वर्गों के विकास के लिए, एक पर्याप्त तथा अनिवार्य शर्त हैं। यह कथन ठीक है या गलत? सही ( ) / गलत ( )

2) सामाजिक–सांस्कृतिक विकास आयामों की एक सूची तैयार कीजिए। चार पंक्तियों में उत्तर लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3) सामाजिक विकास के पांच दृष्टिकोण कौन–कौन से हैं? सात पंक्तियों में उत्तर लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

12.4 आजादी के बाद भारत के विकास के अनुभव

सामाजिक–आर्थिक जीवन के लगभग सभी आयामों में विकास की योजनाएं लागू की गई हैं – जैसे स्वास्थ्य, शिक्षा, जनसंख्या नियंत्रण, उद्योग, यातायात, सिंचाई व्यवस्था एवं कृषि। यहां सभी विकास योजनाओं की सूची प्रस्तुत करना संभव नहीं है, और यह भी सच है कि ऐसी सभी योजनाओं की जानकारी सामान्यतः लोगों को नहीं है। इसलिए हमारा मुख्य उद्देश्य यह है कि हम भारत में आजादी के बाद विभिन्न क्षेत्रों में विकास के लिए विभिन्न दृष्टिकोण से योजनाएं लागू की गई उनका संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करें।

आजादी के बाद भारत ने पहली अथवा दूसरी दुनिया के विकास के दृष्टिकोणों का अनुसरण नहीं किया। भारत ने न पूंजीवादी विकास प्रतिमान (उत्तरी अमेरिका) को पूरी तरह अपनाया और न ही समाजवादी विकास प्रतिमान अपनाया। भारत ने इन दोनों विकास शैलियों के बीच का रास्ता अपनाया जिसे 'मिश्रित अर्थव्यवस्था' नाम दिया गया। भारत ने एक ओर निजी व्यापार तथा उद्योगों को बढ़ावा दिया तथा बड़े औद्योगिक घरानों जैसे बिरला, टाटा आदि को व्यापार व उद्योगों का विस्तार करने का अवसर दिया। साथ ही मध्यम तथा छोटे स्तर के उद्यमियों को आगे बढ़ने में सहयोग दिया। इसके अलावा एक महत्वपूर्ण बात भारत में यह हुई कि सभी औद्योगिक गतिविधियों पर भारत में राज्य का नियंत्रण रहा।

12.4.1 समाजवादी पथ और मिश्रित अर्थव्यवस्था

राज्य ने भारी उद्योगों की स्थापना के लिए उद्यमकर्ता के रूप में भी काम किया, जैसे – इस्पात का उत्पादन तथा बिजली का उत्पादन। रेलवे तथा डाक विभाग को भारत ने पूरी तरह अपने नियंत्रण में रखा। इससे यह पता लगता है कि भारत ने विकास का समाजवादी रास्ता अपनाया था। दूसरी और देखे तो कुछ बड़े एवं छोटे उद्योग निजी उद्यमियों के लिए आरक्षित रखा था। कुछ उद्योगों जैसे कपड़ा उद्योग तथा सीमेंट उद्योग को राज्य के स्वामित्व और निजी स्वामित्व दोनों तरह से चलाया जा रहा था। अन्य अनेक विभागों जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य तथा यातायात आदि को निजी संस्थान तथा राज्य–संस्थान य तो स्वतंत्र रूप से संचालित कर रहे थे या मिलकर चला रहे थे।

यह सच है कि भारत ने मिश्रित विकास पथ अपनाया था, परन्तु भारत की अर्थ व्यवस्था के बारे में विद्वानों के विचार अलग–अलग हैं। कुछ विद्वान यह मानते हैं कि भारत की विकास व्यवस्था पूंजीवादी है। भारी उद्योगों के स्वामित्व में राज्य की

भागीदारी निजी उद्योगों को थामे रखने के उद्देश्य से की गई थी, क्योंकि ये उद्योग अच्छा मुनाफा नहीं दे पा रहे थे और इनमें लम्बे समय तक लगातार निवेश किये जाने की जरूरत थी। इसीलिए अकेले निजी उद्यमी उन्हें चलाने के लिए तैयार नहीं थे। देश का औद्योगिक विकास जरूरी था जो आधारभूत औद्योगिक इकाइयों के बिना सम्भव नहीं था। साथ ही यह तर्क दिया गया था कि बड़े उद्योग मध्यम तथा छोटे उद्योगों पर हावी हो जाते हैं तथा औद्योगिक क्षेत्र कृषि क्षेत्र पर हावी रहता है और यह भी कि चंद बड़े औद्योगिक घरानों में ही आर्थिक शक्ति केंद्रित हो जाती है।

दूसरा विचार यह है कि हमारा पक्षपात समाजवाद की ओर बढ़ता रहा है, इसका प्रमाण है बैंकों का राष्ट्रीयकरण। ये तर्क विवादास्पद हैं, अतः उन्हें हम यहां शामिल नहीं कर रहे हैं। सच्चाई तो अंतिम रूप से यही है कि भारत मिश्रित अर्थव्यवस्था वाले विकास पथ पर अग्रसर है।

12.4.2 खण्ड आधारित विकास

इसमें संदेह नहीं है कि भारत ने औद्योगिक तथा कृषि क्षेत्रों में बहुत तरक्की की है, परन्तु फिर भी यह स्पष्ट है कि खेती के क्षेत्र में होने वाला विकास औद्योगिक क्षेत्र के विकास की तुलना में बहुत कम है। कृषि–क्षेत्र के विकास के लिए अनेक नीतियां बनाई गईं, जिनके परिणाम भी आए, परन्तु वे अपेक्षाओं के अनुकूल नहीं रहे। आजादी के बाद कृषि के विकास के लिए जो नीतियां बनाई गई, उनमें जमींदारी उन्मूलन, चकबंदी तथा भूमि सीमा निर्धारण आदि प्रमुख हैं। इनमें से पहली दो नीतियां बहुत सफल रही, परन्तु तीसरी नीति बड़े किसानों के निहित स्वार्थों के चलते सफल नहीं हो पाई।

यद्यपि बढ़ती जनसंख्या के कारण खेतों के आकार छोटे होते गये हैं, और इस बात का पूरा अंदेशा है कि यदि दुबारा भूमि सीमा निर्धारण की नीति पर काम किया गया तो कृषि–भूमि की उत्पादन प्रक्रिया प्रभावित होगी। ये तीनों नीतियां खण्ड विशेष के विकास को केंद्र में रखकर बनाई गई थीं।

खण्ड विशेष को केंद्र पर रखकर विकास प्रक्रिया को आगे बढ़ाने की दो महत्वपूर्ण उपलब्धियां रही हैं – 'हरित क्रांति' तथा 'श्वेत क्रांति'। इनके परिणामस्वरूप नकदी प्रदान करने वाली फसलें चलन में आई तथा श्वेत क्रांति के फलस्वरूप डेयरी उत्पादों में अत्यधिक वृद्धि हुई और बाजार में उनकी बढ़ती मांग के कारण यह कदम अत्यधिक लाभकारी साबित हुआ। लेकिन यह क्रांतियां पूरे देश में व्यापक रूप से नहीं फैल पाईं। इनका फायदा कुछ गिने–चुने राज्यों को ही हुआ – जैसे पंजाब, हरियाणा, तमिलनाडु गुजरात तथा महाराष्ट्र। महत्वपूर्ण चीज यह है कि इन राज्यों के किसानों को भी कृषि उत्पादों के बदले अच्छा मुनाफा नहीं मिल पाया क्योंकि खेती दूसरी ओर छोटे तथा बड़े कुछ उद्योग पूरी तरह निजी स्वामित्व में चल रहे थे।

बड़े किसान तथा प्रशासनिक एवं राजनैतिक अधिकारियों ने आपस में ऐसी साठ–गांठ की कि ब्लॉक स्तर तथा जिला स्तर पर यह प्रणाली कमजोर पड़ गई।

12.4.3 सामुदायिक विकास और सहकारी आंदोलन

ऐसी ही दुर्दशा सहकारी आंदोलन की भी हुई। भारत में सहकारी आंदोलन के तहत चीन की तर्ज पर सामुदायिक खेती करने (ग्राम स्तर पर), की योजना बनाई गई। इस

योजना के अनुसार एक गांव के किसानों के अधीन सारे खेतों में सामूहिक पैदावार की जाती और अपनी–अपनी जमीन के अनुपात में कृषि उत्पादों का बंटवारा कर दिया जाता परंतु ग्रामीण अंचलों की राजनीति के कारण यह प्रणाली कामयाब नहीं हो पाई। क्योंकि किसान अपनी जमीनों का हक ग्राम स्तर पर सौंपने को तैयार नहीं हुए। वे भूमि के निजी स्वामित्व के छिन जाने की आशंका से ग्रस्त थे। सुप्रसिद्ध संत विनोबा भावे ने इस उद्देश्य को सफल बनाने के लिये भूदान आंदोलन भी शुरू किया था। इसका भी किसानों पर कोई असर नहीं पड़ा।

हां ! एक रास्ता जरूर निकला कि समितियां बनाकर कृषि भूमि की साख के आधार पर किसानों को ऋण देने की प्रथा आरंभ हो गई। ऋण लेने के उद्देश्य से बनाई गई सहकारी समितियां धीरे–धीरे भ्रष्ट हो गई और ज्यादातर समितियां काम नहीं कर पाईं। सहकारी समितियों के माध्यम से जो लोग ऋण प्राप्त कर लेते थे वे उसे लौटाना नहीं चाहते थे।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि स्थानीय लोगों में सहयोग की भावना ठीक से विकसित नहीं हो पाई। शायद इसका कारण यह भी रहा कि सहकारी समितियों का प्रबंधन अधिकतर सरकारी अथवा अर्ध सरकारी अधिकारियों को सौंपा गया था – जैसे, रजिस्ट्रार, मैनेजिंग डाइरैक्टर, प्रशासक आदि। अधिकतर मामलों में राष्ट्रीयकृत बैंक सहकारी समितियों को आर्थिक सहायता देते थे। जिसमें वे अपने सदस्यों को ऋण दे सकें।

ग्रामीण स्तर पर सहकारी आंदोलन ऋण के लेन देन के मामले में महाराष्ट्र में अधिक प्रभावी रहा। विशेष रूप से गन्ना उत्पादकों में जिन्होंने मिलकर सहकारी चीनी मिलों की स्थापना भी की। सहकारिता की भावना अन्य क्षेत्रों में काफी सफल रही है। जैसे – गुजरात का दुग्ध उत्पादक सहकारी संघ गुजरात के आनन्द नामक स्थान पर अधिक सफल रहा। आनंद मिल्क प्रड्यूसर्स यूनियन लिमिटेड (अमूल) का गठन गुजरात के किसानों ने किया था। आज आनंद एशिया का सबसे बड़े दुग्ध उत्पादक संस्थान के रूप में ख्याति प्राप्त कर चुका हैं।

12.4.4 लक्ष्य आधारित सामूहिक योजना

लक्ष्य पर आधारित सामूहिक विकास से संबंधित 20 सूत्री कार्यक्रमों के अंतर्गत अनेक ग्रामीण विकास योजनायें शामिल की गई हैं। इनमें एकीकृत ग्रामीण विकास योजना (IRDP) एक ऐसी योजना है जिसमें क्षेत्रीय विकास तथा लक्ष्य आधारित सामूहिक विकास दोनों दृष्टिकोणों को एक साथ लेकर चला जाता है। क्योंकि इसमें कमान्ड एरिया विकास योजना, सूखा मुक्त क्षेत्र योजना तथा लघु कृषक विकास संस्था शामिल हैं। लक्ष्य आधारित सामूहिक विकास योजना सबसे गरीब व्यक्ति को अपने केन्द्र में रखकर कार्य करती है और इसकी इकाई परिवार को माना जाता है, व्यक्ति को नहीं। इस योजना का उद्देश्य पांच वर्ष की अवधि में हर ब्लॉक के तीन हजार परिवारों को लाभ पहुंचाना है। एकीकृत ग्रामीण विकास योजना के अंतर्गत रोजगार संबंधी अनेक कार्यक्रम शामिल किये गये हैं। जैसे स्वरोजगार का संचालन करने के लिये ग्रामीण युवकों को प्रशिक्षित करना।

इसके अतिरिक्त कुछ अन्य योजनायें भी हैं जैसे राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना (एन. आर.ई.पी.) यद्यपि इन योजनाओं का आकलन करने पर पता लगा है कि यह योजनायें उन लोगों को लाभ नहीं पहुंचा पायेंगी। जिनको लाभान्वित करने के लिये इन्हें

बनाया गया था। यह योजनायें गरीबों के आर्थिक स्तर में सुधार नहीं कर पाईं। इसके लिये इन योजनाओं को संचालित करने वाले कार्यकारी अधिकारियों तथा ग्रामीण क्षेत्र के अभिजात वर्ग के लोगों को दोषी माना जाता है, जो उन संसाधनों का बड़ा हिस्सा हड़प कर गये जो इन योजनाओं को सफलतापूर्वक चलाने के लिये जुटाये गये थे।

अन्य क्षेत्रों में भी भारत ने उल्लेखनीय विकास किया है। भातर में बड़े–बड़े अस्पताल खोले गये हैं, तथा बड़ी संख्या में प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों की स्थापना की गई हैं। अनेक प्रकार की बीमारियों जैसे मलेरिया, पोलियो तथा चेचक जैसे रोगों पर नियंत्रण किया गया जिससे बाल मृत्यु दर में गिरावट आई और लोगों की औसत आयु में वृद्धि हुई।

अब स्थिति यह है कि हमारे देश में परिवहन तथा संचार का व्यापक रूप से जाल बिछाया जा चुका है। लेकिन विकास का लाभ ज्यादातर नगरों में रहने वाले लोगों को हुआ है। ग्रामीण क्षेत्रों की दशा में कोई खास सुधार नहीं दिखता। ग्रामीण क्षेत्रों में पढ़ाने के लिए अच्छे शिक्षक नहीं है, स्कलू हैं परन्तु उसमें मूलभूत सुविधाओं का अभाव है। जैसे, आवश्यक फर्नीचर और ब्लैक बोर्ड तक अनेक विद्यालयों में उपलब्ध नहीं है। प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों में पर्याप्त चिकित्सक, नर्स तथा दवायें भी उपलब्ध नहीं हैं।

इसके अलावा बेरोजगारी बहुत बढ़ी है। कानून और व्यवस्था की स्थिति भी अच्छी नहीं है। सामाजिक तथा सामुदायिक तनावों में वृद्धि हुई है, और लोगों की सामाजिक तथा राष्ट्रीय भावनाओं में भारी कमी आई है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि हमारे देश में मात्रात्मक स्तर में भी विकास हुआ है परन्तु गुणात्मक विकास नहीं हुआ।

जहां तक सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक जागरूकता का सवाल है पूरे देश में तथा ग्रामीण क्षेत्रों में अच्छा परिणाम देखने को मिला है। भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है जिसकी राजनैतिक तथा आर्थिक संरचना अत्यधिक भव्य है, परन्तु इतनी बड़ी जनसंख्या वाले देश में सामाजिक असंतोष और उथल–पुथल से इनकार नहीं किया जा सकता। सरकार की नीतियां लगातार व्याप्त असमानताओं को दूर करने और सामाजिक न्याय की स्थापना करने की दिशाओं में तेजी से काम करती दिख रही हैं।

बोध प्रश्न 4

1) आजादी के बाद भारत ने विकास का कौनसा रास्ता चुना? तीन पंक्तियों में उत्तर दीजिये।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) एकीकृत ग्रामीण विकास योजना (आई.आर.डी.पी.) खंड आधारित विकास का उदारहण है। सही या गलत को चिन्हित कीजिये। सही ( ) / गलत ( )

.....

.....

.....

.....

.....

12.5 सारांश

इस इकाई में यह बताया गया है कि आर्थिक विकास की तुलना में समग्र विकास एक व्यापक अवधारणा है। इसमें सामाजिक, आर्थिक, नैतिक, शैक्षिक, भौतिक तथा मानसिक विकास आदि शामिल है। हमने सामाजिक विकास के बारे में व्याप्त विचारों का अध्ययन किया। इसके बाद हमने सामाजिक विकास के पांच दृष्टिकोणों की व्याख्या की, अंत में हमने भारत में अपनाये गये मिश्रित विकास पथ के बारे में बताया जिसमें पूंजीवाद और समाजवाद दोनों शामिल है।

12.6 संदर्भ

एम.एस. गोरे, (1973). *''सम एस्पैक्ट्स ऑफ सोशल डेवलपमेंट'.* टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल सांइसेज़ः मुम्बई।

आर. पांडे, (1985). ''सोशियोलॉजी ऑफ डिवैलपमेंट : थ्योरिज एण्ड इश्यूज. मित्तल पब्लिशर्सः नई दिल्ली।

एस.एल. शर्मा (एड) (1986). ''डिवैलपमेंट : सोश्यो–कल्चरल डाइमेन्शन्स''. रावत पब्लिकेशनः जयपुर।

12.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) परितर्वन में मूल्यों का समावेश नहीं होता, जबकि विकास एक मूल्य सापेक्ष अवधारणा है। सभी प्रका के परिवर्तन विकास नहीं माने जा सकते। केवल नियोजित तथा वांछित परिवर्तनों को विकास कहा जाता है।

2) विकासशील देश प्रौद्योगिक तथा आर्थिक सहायता के लिए विकसित देशों पर निर्भर होते हैं। इस तरह के सहयोग देने की आड़ में विकसित देश विकासशील देशों का शोषण करते हैं, इस विचार को विकास के निर्भरता का सिद्धांत कहा जाता है।

बोध प्रश्न 2

1) संयुक्त राज्य अमेरिका तथा ब्रिटेन।

2) अ) पूंजीवादी

ब) समाजवादी

3) भारत, पाकिस्तान, थाइलैण्ड, वियतनाम, बेनेजुएला, निकारागुआ – इन सभी देशों को तीसरी दुनिया के देश अथवा विकासशील देश कहा जाता है।

4) तीसरी दुनिया के देशों की सामान्य विशेषतायें इस प्रकार है – अ) अर्थव्यवस्था तथा प्रौद्योगिकी कम विकसित अवस्था में होती है, ब) विकास का व्यापक अर्थ हैं सामाजिक परिवर्तन को अपने आप में शामिल करके चलना, स) तीसरी दुनिया के देशों पर विकसित देशों द्वारा यह दवाब बनाया जाता था कि वे वहीं करें जो वे चाहते हैं।

बोध प्रश्न 3

1) नहीं

2) विकास के सामाजिक सांस्कृतिक आयाम में शामिल हैं – मूलभूत आवश्यकताओं की उपयुक्त ढंग से पूर्ति, आवश्यक सुविधाओं की उपलब्धता, आर्थिक हित, शैक्षिक विकास, सामाजिक अखण्डता तथा समाज में कम से कम असमानता।

3) विकास योजनाओं तथा संसाधनों के केन्द्रीयकरण तथा विकेंद्रीयकरण पर आधारित सामाजिक विकास के पांच दृष्टिकोण हैं – अ) ऊपर से विकास, ब) नीचे से विकास, स) खण्ड आधारित विकास, द) क्षेत्र आधारित विकास, घ) लक्ष्य आधारित सामूहिक विकास।

बोध प्रश्न 4

1) भारत ने मिश्रित अर्थव्यवस्था वाले विकास पथ का अनुसरण किया है। भारत निजी व्यापार तथा उद्योग को प्रोत्साहन देता है तथा साथ ही साथ औद्योगिक व्यापारिक गतिविधियों पर पूरा नियंत्रण रखता है। अब भारत क्षेत्र आधारित विकास तथा लक्ष्य आधारित सामूहिक विकास पर विशेष जोर दे रहा है और इस प्रकार सामाजिक सांस्कृतिक विकास आयाम को महत्व दे रहा है।

2) नहीं।

इकाई 13 वैश्वीकरण*

संरचना

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 वैश्वीकरण का अर्थ

13.3 वैश्वीकरण की पृष्ठभूमि

13.4 वैश्वीकरण का प्रभाव

13.5 वैश्वीकरण : भारतीय परिप्रेक्ष्य

13.5.1 भारतीय अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्र

13.5.2 भारत पर वैश्वीकरण का प्रभाव

13.6 वैश्वीकरण की अच्छाइयां और बुराइयां

13.7 सारांश

13.8 संदर्भ

13.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

13.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप पढ़ेंगे :–

- वैश्वीकरण का अर्थ;
- वैश्वीकरण प्रक्रिया की पृष्ठभूमि;
- समाज पर वैश्वीकरण के प्रभाव की व्याख्या;
- वैश्वीकरण की अच्छाइयों और बुराइयों का वर्णन।

13.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई 12 में आपने सामाजिक विकास के बारे में पढ़ा, पाठ्यक्रम की इस अंतिम इकाई में हमने वैश्वीकरण की प्रक्रिया पर विशेष रूप से जोर दिया है। पूरी दुनिया के लोग पहले की तुलना में अब एक–दूसरे के बहुत निकट आ चुके हैं। लोग ज्ञान, विचार, वस्तुएं तथा धन सब गति में हैं, और एक देश की सीमाओं से निकलकर दुनिया के लगभग सभी देशों में पहुंच रहे हैं। इससे दुनिया के सभी देशों के बीच आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अंतर्संबंधों में वृद्धि हुई है। अब हम वैश्वीकरण के युग में रह रहे हैं।

* डॉ. शैली भाषाजंली द्वारा लिखित।

13.2 वैश्वीकरण का अर्थ

पिछले दशकों में विश्व स्तरीय प्रसार के अर्थ में वैश्वीकरण का प्रयोग होता है। वैश्वीकरण उत्पादों, सेवाओं, प्रौद्योगिकियों, वित्तीय संदर्भों तथा श्रमिकों के लिये अंतर्राष्ट्रीय बाजारों की उपलब्धता पर केंद्रित है। वैश्वीकरण का उद्देश्य राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं को वैश्विक बाजारों से जोड़ता है। इसका वास्तविक उद्देश्य राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं को वैश्विक बाजारों के लिए खोलना है तथा वृहद आर्थिक नीतियों के निर्माण में राष्ट्र के दखल को कम करना है।

वैश्वीकरण दुनिया के सभी देशों के वैश्विक अर्थव्यवस्था से जोड़ता है इसके परिणामस्वरूप पूंजी, उत्पाद तथा सूचनायें इन सभी का स्वतंत्र रूप से दुनिया भर में पहुंचना आरम्भ हो जाता है। इससे केवल अर्थव्यवस्था पर ही प्रभाव नहीं पड़ता बल्कि विश्व स्तर पर राजनैतिक, सांस्कृतिक, सामाजिक तथा पर्यावरणीय क्षेत्र भी प्रभावित होते हैं।

बॉक्स 13.0 : एन्थनी गिडिन्स

समाजशास्त्री ने वैश्वीकरण को विश्वस्तरीय सामाजिक संबंधों के निर्माण का प्रतीक बताया है। इसके कारण दूर स्थित स्थान एक–दूसरे से इस तरह जुड़ जाते हैं कि एक स्थान पर होने वाली घटनायें पर्याप्त दूरियों पर स्थित दूसरे स्थानों को इस तरह प्रभावित करती हैं जैसे वे एक–दूसरे से जुड़े हों।

वैश्वीकरण ने निम्नलिखित परिणाम दिये हैं :–

- अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में वृद्धि हुई है।
- एक कम्पनी एक से अधिक देशों में काम कर सकती है।
- वैश्विक अर्थव्यवस्था पर निर्भरता बढ़ी है।
- पूंजी, उत्पाद तथा सेवाओं को स्वतंत्र रूप से एक देश से दूसरे देश में वैश्विक स्तर पर पहुंचाया जा सकता है।

वैश्वीकरण के कारण अब लोगों को यह सुविधा प्राप्त हो गई है कि वे एक से अधिक देशों में तथा एक साथ अनेक व्यापार कर सकते हैं, अथवा यह कहें कि एक देश की चीजों को अन्य देशों में खरीदने की सुविधा प्राप्त हुई है। जो कम्पनियां एक साथ अनेक देशों में काम करती हैं उन्हें बहुराष्ट्रीय कम्पनियां, (एम.एन.सी.) अथवा अंतर्राष्ट्रीय कम्पनियां (टी.एन.सी.) कहा जाता है। जैसे, वोलमार्ट, होंडा, वोडाफोन तथा साइमन्स।

अंतर्राष्ट्रीय कम्पनियाँ किसी देश में व्यापार करने को निम्न आधारों पर प्राथमिकता देती है :

- सस्ते कच्चे माल की उपलब्धि;
- कम वेतन पर पर्याप्त रूप से श्रमिकों की उपलब्धि;
- अच्छी परिवहन व्यवस्था;
- उत्पादों को बेचने के लिये बाजारों की उपलब्धि;
- अनुकूल सरकारी नीतियां।

13.3 वैश्वीकरण की पृष्ठभूमि

वैश्वीकरण की प्रक्रिया नई नहीं है। अंतर केवल यह है कि इससे पहले वैश्वीकरण की गति इतनी मद थी कि लोग उसे ठीक से देख नहीं पाएं। परन्तु जैसे–जैसे सूचना एवं प्रसारण तकनीक का विकास हुआ और संपर्क के नये–नये माध्यम विकसित हुए, दुनिया के सभी देशों के बीच संबंध तेजी से बढ़े और दुनिया पहले की तुलना में बहुत छोटी हो गई। केवल वैश्वीकरण की प्रवृत्ति ही तेज नहीं हुई है परन्तु आर–पार जाने तथा संगठित होने की प्रक्रियाओं में इतनी तेजी से बदलाव आये हैं कि हमारे दिन–प्रतिदिन के जीवन में वैश्वीकरण का प्रभाव कई गुना बढ़ गया है और इसका नतीजा यह हुआ है कि पूरा विश्व एक विशाल बाजार स्थल के रूप में दिखाई देने लगा है। वैश्वीकरण शब्द का इस्तेमाल 1980 के दशक में शुरू हुआ। दुनिया के अनेक देशों में तेजी से प्रौद्योगिक विकास हुआ और इसके कारण अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर आना–जाना और संपर्क करना पहले से बहुत आसान और तेज गति से होने लगा। व्यापार तथा वित्तीय संसाधनों का आदान –प्रदान तथा पूंजी का प्रवाह तेजी से बढ़ा। जिन घटकों ने वैश्वीकरण की प्रक्रिया को अत्यधिक प्रभावित किया उनका विवरण इस प्रकार है :–

- परिवहन और संचार की तकनीक में तेजी से परिवर्तन होने के कारण समय, दूरी और जानकारी की कमी से तीनों स्थितियां दुनिया के लोगों को निकट आने में बाधा नहीं रहीं। बीसवीं शताब्दी में हवाई जहाज, उपग्रह, संचार, केबल तथा इंटरनेट तथा मोबाइल की तकनीक ने विभिन्न देशों के लोगों के बीच संपर्कों में नजदीकियाँ ला दी।

- इसके साथ ही व्यापार की स्वतंत्रता मिली। विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यू. टी. ओ) ने विभिन्न देशों के बीच स्वतंत्र व्यापार पर विशेष रूप से जोर दिया। इससे विश्व भर के देशों के बीच बाधायें दूर हुईं और व्यापार को बढ़ावा मिला।

- श्रमिकों तथा कौशल युक्त कर्मचारियों की उपलब्धि – भारत जैसे देशों में मजदूर कम वेतन पर आसानी से उपलब्ध होते हैं और इसके साथ ही उच्च स्तरीय कौशल में प्रवीण कर्मचारी भी सुगमता से उपलब्ध हो जाते हैं। जिन उद्योगों में बड़ी संख्या में मजदूरों को लगाने की आवश्यकता पड़ती है जैसे – वस्त्र उद्योग, वे कम वेतन पर पर्याप्त संख्या में श्रमिक प्राप्त कर सकते हैं तथा नयी व्यवस्था के तहत कानूनी प्रतिबंध (एल.ई.डी.सी. के कारण बहुत कम हो गये हैं।

- विचारों में आये परिवर्तन के कारण भी वैश्वीकरण को बढ़ावा मिला है। अब दुनिया के लोग यह मानने लगे हैं कि स्वतंत्र व्यापार, निजी औद्योगिक संस्थान तथा प्रतिस्पर्धा बाजार आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

गतिविधि 1

क्या आप यह मानते हैं कि कोविड–19 नामक महामारी वैश्वीकरण के कारण फैली। इस विषय पर एक पृष्ठ का आलेख तैयार कीजिए और अपने अध्ययन केंद्र पर अन्य छात्रों के साथ इस पर चर्चा कीजिए।

1980 के दशक के उत्तरार्ध में अनेक विकासशील देशों को लगा कि संरक्षणात्मक नीतियों व अन्य आर्थिक संकटों के कारण उनकी अर्थव्यवस्था घाटे में जाने लगी है;

तब अंतराष्ट्रीय व्यापार की बाधाओं को दूर किया। इसी दौर में पूर्वी दुनिया के अनेक देशों ने वैश्विक व्यापार व्यवस्था से जुड़ने के लिए तथा एशिया के विकास के लिए (जो 1980 के दशक में व्यापार की दृष्टि से सबसे अधिक बंद क्षेत्र बनकर रह गया था) प्रगतिशीलता का परिचय दिया तथा व्यापार से जुड़ी बाधाओं को हटाया। तब अमेरिका, जापान तथा यूरोपीय देश जिनका डब्ल्यू. टी. ओ. पर आधिपत्य था (विश्व व्यापार संगठन में 1995 तक 135 देश शामिल हो गये थे) तथा अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष तथा विश्व बैंक (विकास प्रक्रिया को वित्तीय सहयोग देने में लगे) ने दुनिया के सभी गरीब देशों पर यह दबाव बनाया कि वे अपने व्यापारों और बाजारों को खोलें तथा विदेशी व्यापारियों को अपने घरेलू बाजार में प्रवेश करने दें। सूचना एवं प्रसारण तकनीक (आई सी टी) के इस्तेमाल में तेजी से वृद्धि हुई और वैश्वीकरण की प्रक्रिया में भारी उछाल आ गया। बाजारों के प्रति अधिक जागरूकता तथा पूंजी स्रोतों की जानकारियों ने अंतराष्ट्रीय व्यापार के द्वारा खोल दिए।

13.4 वैश्वीकरण का प्रभाव

समाज पर वैश्वीकरण का व्यापक और बहु–आयामी प्रभाव पड़ता है। वैश्वीकरण की व्यापकता व्यक्तियों की निजी पंसद तक तेजी से पहुँच जाती है तथा उनके आर्थिक व राजनैतिक जीवन को भी प्रभावित करती है। वैश्वीकरण विभिन्न देशों के बीच पारस्परिक सहयोग एवं सहकार का ढांचा भी तैयार कर देता है जिससे वे गैर–आर्थिक समस्याएं जो सभी देशों के लिए महत्व की होती हैं, जैसे अप्रवासन, पर्यावरण तथा वैधानिक समस्याएं आदि को भी मिल–जुलकर सुलझा सकते हैं।

आर्थिक स्तर पर आर्थिक उदारीकरण की प्रवृत्ति बढ़ जाती है। यह मुक्त व्यापार, स्वतंत्र श्रमिक, वस्तुओं तथा वित्तीय बाजारों में प्रतिबिंबित होती है। उन चीजों तथा सेवाओं के निर्यात में उछाल आ जाता है जिनमें देशों की क्षमताएं अधिक होती हैं।

राजनैतिक क्षेत्र पर वैश्वीकरण का सबसे अधिक प्रभाव यह पड़ता है कि देशों की राष्ट्रीय–सीमितता कम हो जाती है। वैश्वीकरण के प्रभाव से अनेक देश वैश्विक व्यापारिक संगठनों के सदस्य बन गए। अनेक वैश्विक संस्थान अस्तित्व में आए, जैसे यूरोपियन संघ, डब्ल्यू टी ओ, 'अंतर्राष्ट्रीय आपराधिक न्यायालय आदि। अनेक राष्ट्रीय संस्थान अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों के रूप में कार्य करने लगे। वैश्वीकरण का एक बड़ा प्रभाव यह पड़ा कि गैर सरकारी संस्थान (एनजीओ) तेजी से सक्रिय हुए। मानवतावादी सहयोग तथा विकासात्मक प्रक्रियाओं को बढ़ावा देने में एनजीओ की बड़ी भूमिका रही। वैश्वीकरण के कारण अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को बढ़ावा मिला। विभिन्न देशों के बीच आप्रवासन मुक्त व्यापार क्षेत्रों का विकास, विभिन्न संस्कृतियाँ वाले समाजों का एक दूसरे के सम्पर्क में आना, वैश्विक संस्कृति का उदय आदि परिवर्तन वैश्वीकरण के कारण ही संभव हो सके।

उपभोक्ताओं की संख्या में ज़बरदस्त वृद्धि हुई। विभिन्न प्रकार के उत्पादों और सेवाओं की मांग बहुत बढ़ गई। जिनमें कुछ आवश्यकताओं पर आधारित थीं और कुछ पसंद पर। वैश्वीकरण ने दुनिया भर के लोगों को जीवन शैलियों में भारी बदलाव ला दिया। विश्व व्यापी रूझानों के प्रति अनुकूलन में तेजी से वृद्धि हुई। सांस्कृतिक समरूपता वाले एक वैश्विक उपभोक्ता समाज का उदय हुआ। संचार–प्रौद्योगिकी में आई क्रांति ने लोकप्रिय व संस्कृति के दायरे को जादुई ढंग से प्रभावित किया। सूचना प्रौद्योगिकी के कारण स्थानीयता आधारित लोकप्रिय संस्कृति को अपने आप को विकसित करने

और बड़े श्रोता–समूह तक पहुँचने का अवसर मिला। जैसे वैश्विक संगीत ने अपने–आप को इस तरह विकसित किया कि वह पूरी दुनिया में सुना जाता है। पुरानी तथा नई संगीत परम्पराएं जो कुछ वर्ष पहले तक स्थानीय श्रोताओं के छोटे से समूह तक ही पहुंच पाती थीं, अब वे पूरी दुनिया में पहुँच रही है।

बाक्स 13.1 : अंतर्राष्ट्रीय करार

पीटर डिकिन्स ने अंतर्राष्ट्रीय निगम की परिभाषा इस प्रकार की है – एक व्यापारिक निकाय जो एक से अधिक देशों में एक साथ काम करने तथा सहयोग व नियंत्रण द्वारा सफलतापूर्वक संचालन की क्षमता रखता है, चाहे स्वामित्व हर देश में उसका ही रहे या न रहे। कुछ उच्च स्तरीय टी एन सी, जैसे कि 'नाइक', अन्य देशों में अपने उत्पादन केंद्र नहीं चलातीं। नाइक विश्व की सबसे बड़ी खिलाड़ियों के जूते बनाने वाली कंपनी है, वह स्वयं कपड़े या जूतों का निर्माण नहीं करती। यह दक्षिण कोरिया तथा ताइवान की कंपनियों से करार के आधार पर उत्पाद तैयार करवाती है। ये कंपनियां केवल अपने देशो में ही कपड़ों व जूतों का निर्माण नहीं करती, बल्कि फिलीपीन्स तथा वियतनाम जैसे देशों में इनका उत्पादन करवाती है। 'नाइक' के विकास, बाजार और बिक्री का काम देखते हैं 'नाइक' का सह–संस्थापक तथा मुख्य कार्यकारी अधिकारी फिल नाइट कम्पनी का सर्वेसर्वा है। 'नाइक' इस समय 800 ठेके के कारखानों में अपने उत्पाद तैयार करवाता है और 50 से अधिक देशों में छः लाख कर्मचारी 'नाइक' के लिए काम करते हैं। 50 में से एक देश संयुक्त राज्य अमेरिका भी हैं 2003 के मध्य में 'नाइक' ने रेट्रो जूते बनाने वाली कंपनी 'कनवर्स' को 3050 लाख डालर का भुगतान किय था। यह दुनिया की बहुत बड़ी कंपनी है जो अपने लिए भी बड़े स्तर पर उत्पादन करती है और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अन्य कंपनियों के लिए उत्पादन करके देती है।

बोध प्रश्न 1

1) वैश्वीकरण किस कहते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

2) वैश्वीकरण के कुछ प्रमुख प्रभावों का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3) वैश्वीकरण के कारण आधुनिक दौर में भारत का पतन हुआ है। सही ( ) / गलत ( )

.....

.....

.....

.....

.....

13.5 वैश्वीकरण : भारतीय परिप्रेक्ष्य

1990 के दशक के आरंभिक वर्षों में भारतीय अर्थव्यवस्था में भारी नीतिगत परिवर्तन हुए थे। इस नये आर्थिक सुधार को उदारीकरण, निजीकरण तथा वैश्वीकरण के नाम से जाना जाता है। (एलपीजी मॉडल) इसका उद्देश्य भारतीय अर्थव्यवस्था को गति देना तथा वैश्विक प्रतिस्पर्धा में उतारना था। अर्थव्यवस्था को अधिक सक्षम बनाने के लिये औद्योगिक क्षेत्र, व्यापार तथा वित्तीय क्षेत्रों में लगातार सुधार किये गये। भारतीय अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में उठाया गया यह कदम भारतीय अर्थव्यवस्था को वैश्विक अर्थव्यवस्था के उदारीकरण की दिशा में ढांचागत परिवर्तन करने हेतु पहला कदम 1991 में उठाया गया था। नई आर्थिक नीति की विशेषतायें इस प्रकार हैं – निजीकरण, वैश्वीकरण, आधुनिकीकरण, उत्पादन क्षमता में वृद्धि तथा विकास दर में वृद्धि।

संरचनात्मक समाजियोत द्वारा शामिल किए गये उद्देश्य कुछ इस प्रकार है :

- नियंत्रण मुक्ति और विनियमन
- विदेशी उत्पादों तथा विदेशी निवेश के प्रवेश की स्वतंत्रता
- बाजार के अनुकूल वित्तीय आदान–प्रदान, व्यापार और ऋणनीति की स्वीकृति
- सार्वजनिक खर्चों में कैटोती
- राजकोषीय घाटे की सीमा को निम्न स्तर पर लाना
- आधुनिकतम प्रौद्योगिकियों को स्वीकार करना
- सरकारी निवेश को विशेष रूप से मूलभूत सुविधाओं के निर्माण, स्वास्थ्य, शिक्षा तथा इसी तरह के अन्य क्षेत्रों पर खर्च करना
- निकास नीति
- सब प्रकार के अनुदानों की समाप्ति
- (कृष्णामूर्ति, 1991)

13.5.1 भारतीय अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्र

क्योंकि भारत एक कृषि आधारित अर्थव्यवस्था है, अतः वैश्वीकरण के दौर में कृषि क्षेत्र के सभी पक्षों पर विशेष प्रभाव पड़ा जैसे प्रौद्योगिक विकास, विकसित उत्पादन तकनीक तथा गुणवत्ता आधारित अभिवृद्धि। कृषि के तीनों क्षेत्रों में खेती, बाजार तथा

औद्योगिक सहयोग में विशाल उन्नति हुई। अच्छे बीजों के विकास तथा उत्पादन के लिये अनेक नई कृषि प्रौद्योगिकियों को लागू किया गया। समग्र कृषि क्षेत्र में ऑर्गेनिक तथा हाइब्रिड प्रकार के बीज चलन में आये। इसके अलावा सिंचाई की नई विधियां तथा नई प्रौद्योगिकियां इस्तेमाल की गई। कृषि उत्पादों की बिक्री के लिये वैश्वीकरण के दौर में नये–नये बाजारों का उदय हुआ। इससे कृषि उत्पादों के निर्यात को बढ़ावा मिला। विदेशों में भारत के कृषि उत्पादों को खरीदने के लिये ऊंचे दाम देने वाले क्रेता मिले, और भारत के कृषि उत्पादों की मांग विश्व के बाजारों में बढ़ती गई। उत्पादन के बाद की गतिविधियों में ई–कॉमर्स के कारण बहुत सहयोग मिला जैसे – कृषि उत्पादों की बिक्री।

कृषि क्षेत्र में औद्योगिक विकास को भी वैश्वीकरण के कारण बढ़ावा मिला। खेती में पैदावार करने से संबंधित मशीनें, रासायनिक खाद आदि की बिक्री बढ़ी। खपत में वृद्धि होने के कारण खाद्य पदार्थों तथा खाने की चीजों के संरक्षण के लिये खाद्य प्रसंस्करण उद्योग का विकास हुआ। दूसरी ओर जी एम फसलें, मूल्य – प्रतिस्पर्धा, डब्ल्यू टी ओ की शर्तों के अनुपालन से जुड़ी समस्याएं डब्ल्यू टी ओ सरकार द्वारा किसानों को दिये जाने वाली आर्थिक सहायताओं को सीमित रखने पर जोर देता है।

अनेक विदेशी कम्पनियां भारत में अपने उद्योग स्थापित कर चुकी हैं, खासकर औषधि निर्माण के क्षेत्र में, बीपीओ, पेट्रोलियम, निर्माण तथा रासायनिक क्षेत्र आदि में। इससे देश में बड़ी संख्या में बेरोजगारों को रोजगार मिला है। विदेशी कम्पनियां उच्चतर तकनीक लेकर आई जिससे भारतीय उद्योग जगत में प्रतिस्पर्धा बढ़ गई तथा देश में अनेक प्रकार की प्रौद्योगियां चलन में आ गई।

नई प्रौद्योगिकियों के इस्तेमाल के कारण अनेक प्रकार के काम मशीनों द्वारा होने लगे और श्रमिकों व कर्मचारियों की मांग कम हो गई और बेरोजगारी बढ़ने लगी। औषधि उत्पादन के क्षेत्र में, रासायनिक, निर्माण और सीमेंट उद्योग में लोगों को नौकरियों से हाथ धोना पड़ा। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के प्रवेश से बाजार में प्रतिस्पर्धा की स्थिति बढ़ गई तथा गुणवत्ता तथा उत्पादन के मामले में घरेलू कम्पनियों पर दबाव बढ़ गया और उन्हें बाजार में टिकना मुश्किल हो गया। भारत के अनेक उद्योगपति अन्य देशों में निवेश कर चुके थे। विदेशों में भारतीय कम्पनियां संयुक्त उद्यम, विलय तथा अधिग्रहण आदि करारों व समझौतों से बंधी थीं। इससे उनके लिए विश्वस्तरीय प्रतिस्पर्धा की चुनौतियों का सामना करना पड़ा। निवेश के नियमों में ढील और लाइसेंस प्राप्त करने की सुविधा के कारण सेवाओं दूर–संचार, विद्युत–उपकरण आदि क्षेत्रों में विदेशी उद्यमियों ने आगे बढ़कर निवेश किया। विविध विशिष्ट आर्थिक क्षेत्रों की स्थापना के कारण निर्यात की संभावनाएं बढ़ी हैं। सरकार सभी लघु उद्योगों को भारी आर्थिक सहायता दे रहे है। ऋण लेने, माइक्रो फाइनेंस तथा अनेक रूपों में पूंजी उधार लेने के रास्ते खोल दिये गये।

वैश्वीकरण ने विदेशी निवेशकों को घरेलू बाजार में निवेश करने के रास्ते भी खोल दिए। इससे प्रतिस्पर्धा और नवीनीकरण की प्रक्रिया और तेज हो गई। अत्यधिक प्रतिस्पर्धा के इस दौर में घरेलू, वित्तीय, बिचौलियों के सामने बड़ी चुनौती खड़ी हो गई, और उच्च प्रतिस्पर्धा के दौर में उन्हें अपने आपको टिकाये रखना मुश्किल हो गया। बैंकों की संरचनाओं तथा कार्यप्रणालियों में अत्यधिक प्रतिस्पर्धा तथा उपभोक्ता मूलक व्यवस्था और निजी बैंकों के अस्तित्व में आ जाने के कारण राष्ट्रीयकृत बैंकों के सामने कड़ी चुनौती की स्थिति उत्पन्न हो गई। वैश्वीकरण का भारत पर सबसे बड़ा

प्रभाव यह पड़ा कि देश में सूचना प्रौद्योगिकी तथा व्यावसायिकों की संख्या में वृद्धि हुई है। स्थानीय तथा विदेशी कम्पनियों ने खासकर अमेरिका और ब्रिटेन में, उपभोक्ताओं को सेवा प्रदान करने के लिये कौशल युक्त व्यावसायिकों का चयन किया।

भारत में कम वेतन पर अंग्रेजी बोलने वाले अच्छे पढ़े लिखे कर्मचारी आसानी से उपलब्ध थे। विदेशी कम्पनियों ने इसका फायदा उठाया तथा वैश्विक संचार व्यवस्था की प्रौद्योगिकियों जैसे वॉइस ओवर आई पी (B.O.I.P.) ई–मेल तथा इंटरनेट, आदि सुविधाओं के चलते अंतर्राष्ट्रीय उद्यम भारत में कम निवेश करके बड़ी संख्या में योग्य कर्मचारियों को प्राप्त करने में सफल रहे और भारत में उन्होंने अपने उद्यमों का प्रसार किया।

13.5.2भारत पर वैश्वीकरण का प्रभाव

वैश्वीकरण ने भारत में निम्न क्षेत्रों में भारी सहयोग दिया :

- रहन–सहन के स्तर का विकास हुआ।
- गरीबी उन्मूलन।
- खाद्यान्न में आत्म निर्भरता
- उद्योगों तथा सेवाओं के विस्तार के लिये बड़े स्तर पर बाजारों का उदय।
- राष्ट्रीय आर्थिक विकास में भारी योगदान।

बॉक्स 13.2 : वैश्वीकरण ने औषधीय परिवर्तन में क्रांति ला दी

'औषधीय पर्यटन' वैश्विक दुनिया में अत्यधिक लोकप्रिय नया चलन है। वैश्वीकरण के कारण पिछले कुछ वर्षों में अमीर देशों से एशिया के देशों में चिकित्सीय यात्राओं का सिलसिला बढ़ा है। चिकित्सीय पर्यटन एक लोकप्रिय जन–संस्कृति है जिसके तहत दूरस्थ या समुद्रपार के देशों से चिकित्सा कराने के लिए लोग आते हैं। वे दन्त चिकित्सा कराने या शल्य चिकित्सा आदि के उद्देश्य से जिस देश में आते हैं उसी देश के पर्यटन स्थलों का भ्रमण भी करते हैं।

भारत में विश्वस्तरीय चिकित्सा प्रदान करने में एक अग्रणी देश के रूप में उभरा है वह भी कम खर्च पर। इसलिए भारत चिकित्सीय पर्यटन के लिए सबसे उपयुक्त देश बन गया है। भारत में प्रतिवर्ष लाखों लोग यहाँ चिकित्सा करने के लिए विदेशों से आते हैं। भारत के अस्पताल तथा विशिष्ट चिकित्सा संस्थान जो अनेक प्रकार की स्वास्थ्य समस्याओं का समाधान रखते हैं। कॉस्मेटिक सर्जरी, दन्त–चिकित्सा, हृदय शल्य चिकित्सा, कोरोनरी बाइपास, हृदय की जांच, वाल्व प्रतिस्थापन, घुटना प्रतिस्थापन, आंखों की शल्य चिकित्सा आदि मामलों में भारत में विश्व स्तरीय चिकित्सा सेवाएं उपलब्ध हैं।

भारतीय पारंपरिक चिकित्सा जैसे आयुर्वेदिक चिकित्सा तथा पारंपरिक चिकित्सा के साथ–साथ अनेक दवाओं के सेल से आधुनिक ढंग की चिकित्साओं की सुविधा भी भारत में उपलब्ध है। भारत की संस्था 'द एसोसियेटिड चेम्बर्स ऑफ कामर्स एण्ड इंडस्ट्री ऑफ इंडिया (ए एम एस ओ सी एच ए एम) के अनुमान के अनुसार चिकित्सीय पर्यटन से भारत प्रतिवर्ष 3500 करोड़ कमाता है और यह अपेक्षा रखता है कि भविष्य में इस मंद से भारत की आय 2015 में बढ़कर 9500 करोड़ हो जायेगी। ये

अनुमान चिकित्सीय पर्यटन की स्वास्थ्य समिति का है जिसकी अध्यक्षता सर गंगा राम अस्पताल के चेयरमेन, एम्स तथा नई दिल्ली के अन्य प्रतिष्ठित अस्पतालों के अग्रणी चिकित्सकों के साथ मिलकर करते हैं। (पी. उपाध्याय, 2011)।

13.6 वैश्वीकरण की अच्छाइयां और बुराइयां

वैश्वीकरण और इसके सकारात्मक व नकारात्मक प्रभावों को लेकर दुनिया भर में बहस जारी है। एक ओर यह माना जाता है कि वैश्वीकरण ने मानव–समाजों को संपन्नता दी है, व्यापार तथा ज्ञान व सूचनाओं विश्व स्तर पर विकास व विस्तार हुआ है। परन्तु दसूरी ओर कुछ लोग यह मानते हैं कि वैश्वीकरण ने अमीरों को गरीबों के शोषण करने का मार्ग प्रस्तत किया है तथा समाजों के आधुनिकीकरण के कारण पारंपरिक संस्कृतियों का अस्तित्व खतरे में हैं।

वैश्वीकरण की अच्छाइयों का विवरण इस प्रकार है :

- व्यावसायिक कम्पनियों तथा उपभोक्ताओं के लिए अंतर्राष्ट्रीय बाजार उपलब्ध है और बाजार में इतनी तरह के उत्पाद मौजूद हैं कि अपनी पसंद के उत्पाद चुनने की भारी सुविधा है।
- विकसित देशों से विकासशील देशों की ओर निवेश का उन्मुक्त प्रवाह हो रहा है जिसे आर्थिक पुननिर्माण के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। सीधे विदेशी निवेश (एफ डी आई) के कारण विश्व व्यापार को तेजी से विकसित होने का खुला अवसर मिला है। जिसके फलस्वरूप प्रौद्योगिकी हस्तांतरण, औद्योगिक पुनर्निर्माण तथा वैश्विक कम्पनियों के विकास में भारी उछाल आया है।
- विभिन्न देशों के बीच वैश्विक स्तर पर सूचनाओं के उन्मुक्त एवं तीव्र प्रवाह के कारण (टेलिविजन और इंटरनेट के माध्यम से) तथा व्यापक स्तर पर सांस्कृतिक आदान–प्रदान के कारण दुनिया भर में सांस्कृतिक अवरोध अब समाप्त होने को हैं।
- प्रौद्योगिक विकास के कारण बौद्धिक प्रतिभाओं का प्रवाह अब विपरीत दिशा में अर्थात विकसित देशों से विकासशील देशों की ओर होने लगा है।
- उच्च स्तरीय वैश्वीकरण वाली अर्थव्यवस्थाएं अपनी कम्पनियों को ऐसी स्थिति में खड़ा कर देती है कि उनकी उत्पादन कीमत कम हो जाती है जिसके परिणामस्वरूप ये कम्पनियां बाजार में अपने उत्पादों की कीमत कम कर देती हैं जिससे बिक्री में वृद्धि होती हैं और अर्थव्यवस्था और मजबूत हो जाती है। यद्यपि इसका छोटी व्यावसायिक इकाइयों को नुकसान हो सकता है। ऐसे में उन्हें घरेलू स्तर पर प्रतिस्पर्धा में टिके रहना मुश्किल हो जाता है।

वैश्वीकरण की बुराइयां

- बाहर से काम करवाने अर्थात् दूसरी कम्पनी से अपने लिए काम करनवाने (आउटसोर्सिंग) के कारण उस कम्पनी को कर्मचारियों तथा श्रमिकों की जरूरत कम हो जाती है और अनेक लोगों की नौकरियां चली जाती हैं। विकसित देशों में कर्मचारियों की इस तरह छंटनी होने से रोजगार का संकट उत्पन्न हो जाता है। ऐसी स्थिति से बचने के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे देश ने बी पी ओ पर प्रतिबंध लगा दिया है।

- ऐसे में संचारी रोगों के फैलने का खतरा बढ़ जाता है।
- विश्व स्तर पर काम करने वाली बहुराष्ट्रीय कम्पनियों अथवा निगमों से यह खतरा रहता है कि कहीं विश्व पर अपना आधिपत्य जमाकर वे दुनिया पर राज न करने लगें। छोटे विकासशील देश ज्यादा कमजोरी की स्थिति में होते हैं। ऐसे देशों में उपनिवेशी का डर बना रहता है।
- कम वेतन पर काम करने के लिए विवश करते हुए कर्मचारियों व श्रमिकों का शोषण।
- वैश्विक पर्यटन में उछाल
- पर्यावरणीय चुनौतियाँ – जैसे वैश्विक स्तर पर प्रदूषण का बढ़ जाना।

बॉक्स 13.3 : वैश्वीकरण, व्यापार तथा पर्यावरण : ब्राजील का मामला

वैश्वीकरण के कारण पर्यावरणवाद को लेकर व्यापक रूप से बहस छिड़ गई है तथा हरित क्रांति से जुड़े लोग इसके दूरगामी दुष्प्रभावों की आशंका को लेकर चिंतित हैं जैसे – पर्यावरणीय, प्रदूषण। यद्यपि कुछ शोध कर्ता यह मानते हैं कि यदि समस्या आती भी है तो उससे डरने की जरूरत नहीं है, क्योंकि हर समस्या का समाधान स्वयं समस्या में छिपा होता है। वैश्वीकरण के कारण दुनिया के देश मिलकर कोई दुनिया को ऐसा बना सकते हैं कि दुनिया आर्थिक रूप से सरल तथा पर्यावरण सहयोगी बन जाय।

ब्राजील में सोयाबीन का उत्पादन वहां की अर्थव्यवस्था के विकास के लिए अत्यधिक महत्वूर्ण व उपयोगी साबित हुआ परन्तु इससे अमेजॉन तथा करेडो के सवाना क्षेत्र में असुरक्षित जंगलों को विस्तार हो गया। पिछले 50 वर्षों में उत्पादन 2.6 करोड़ टन से बढ़कर 26 करोड़ हो गया। 1970 में 10 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में सोयाबीन उगाया गया था परन्तु 2010 तक सोयाबीन उत्पादन का क्षेत्र 230 लाख हेक्टेयर हो गया। अमेरिका के बाद ब्राजील दुनिया में दूसरा सबसे बड़ा सोयाबीन उत्पादन देश बन गया। तीन दशकों से अधिक समय तक अमेजॉन क्षेत्र में जंगलों के उजाड़े जाने के कारण यह क्षेत्र चरागाह बनकर रह गया और पशुपालन तेजी से बढ़ा। चरागाह क्षेत्र बढ़ता गया क्योंकि इस क्षेत्र की जमीन इतनी अनुपजाऊ हो गई थी कि उसमें उगाया ही नहीं जा सकता था। जंगल कट गये थे या जला दिये गये थे और मिट्टी की उत्पादन क्षमता में गिरावट आ जाने के कारण यहाँ की जमीन में कोई फसल नहीं उगाई जा सकती थी।

1990 के उत्तरार्ध में बहुराष्ट्रीय निगमों, जैसे कारगिल ने दक्षिण मध्य अमेजॉन क्षेत्र की अवसंरचना में निवेश किया। जमीन को उपजाऊ बनाने के लिए नदी के नये 'रिवर पोर्ट' बनाये गये, उर्वरकों का इस्तेमाल किया गया, मशीनों का इस्तेमाल किया गया। इससे कृषि उत्पादन, खासकर सोयाबीन के उत्पादन में उछाल आ गया जैसे माटो ग्रोसो में सोयाबीन की खेती सन 2000 के बाद से अब तक 1000 किलोमीटर क्षेत्र से बढ़कर 2000 किलोमीटर क्षेत्र में होने लगी है। उजाड़ जंगलों के क्षेत्रों में तेजी से सोयाबीन की खुली की जा रही है। इससे सोयाबीन के तेल तथा तेल के अन्य उत्पादों का बाजार बढ़ा और अनेक उद्योग खड़े हो गये। ब्राजील, चीन, भारत तथा दुनिया के अन्य देशों में सोयाबीन उत्पादों की आपूर्ति की जा रही है।

इसी अवधि में सोया की खेती ब्राजील के अमेजॉन क्षेत्र में व्यापक स्तर पर की गई। इससे यहाँ उपग्रह से निगरानी की तकनीक बड़े स्तर पर विकसित हुई। सन् 2000 के बाद से जंगलों के कटान का निरीक्षण साप्ताहिक रूप से संभव हो गया है। जबकि 2000 से पहले वार्षिक रूप से ही निगरानी संभव हो पाती थी। इससे यह पता लगाना आसान हो जाता है कि जंगल पशुओं को चराने के लिए काटे जा रहे है या सोयाबीन की खेती करने के लिए।

बोध प्रश्न 2

1) वैश्वीकरण की दो अच्छाइयों तथा दो बुराइयों का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिएः

अ) आधुनिक यातायात तथा संचार संसाधनों के चलन में आने से पहले वैश्वीकरण ..... था।

ब) वैश्वीकरण ..... के विस्तार में तेजी ला सकता है।

स) वैश्विक ..... सभी देशों के लिए एक गंभीर समस्या है।

13.7 सारांश

उत्पादों, सेवाओं और मनुष्यों का दुनिया के सभी देशों में चाहे जिस सीमा तक पहुँचना और देशों के बीच विश्वस्तीय संबंध होना वैश्वीकरण कहलाता है। वैश्विक अर्थव्यवस्था का सबके लिए खुला होने तथा दुनिया के देशों का एक दूसरे के साथ उन्मुक्त रूप से व्यापार करने से वैश्वीकरण की स्थिति उत्पन्न होती है। दूसरे शब्दों में – यदि कुछ देश पहले विश्व–व्यापार से नहीं जुड़े थे और विदेशी निवेश को भी अपने यहाँ अनुमति नहीं दे रहे थे – उनका विश्व–व्यापार से जुड़ जाना और विदेशी निवेश के लिए स्वयं को खोल देना, उनके लिए वैश्वीकरण है। इसके परिणामस्वरूप दुनिया के विभिन्न देशों के बीच व्यापक स्तर पर अंतर्सम्बंध स्थापित हो जाते हैं और उनकी अर्थव्यवस्थाएं विश्व अर्थव्यवस्था का हिस्सा बन जाती है।

वैश्वीकरण एक ऐसी प्रक्रिया हे जिसमें व्यापार का उदारीकरण हो जाता है, निवेश और पूंजी का उन्मुक्त प्रवाह होने लगता है, तकनीक विकास हो जाता है और विश्व स्तर के साथ तालमेल बिठाने का देशों पर दबाव आ जाता है। वैश्वीकरण ने विभिन्न देशों के बीच व्यावसायिक संबंधों के रास्ते में आने वाली सभी बाधाओं को बहुत कम कर दिया है, विभिन्न देशों के बीच आर्थिक प्रतिस्पर्धा को बढ़ाया है और वैश्विक स्तर पर मान्य श्रमिक स्तर स्वीकार किया है।

भारत के संदर्भ में वैश्वीकरण को इस तरह समझा जा सकता है कि भारत ने प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के लिए अपनी अर्थव्यवस्था को खोल दिया है। भारत की आर्थिक गतिविधियों में विदेशी कम्पनियां बेझिझक निवेश कर सकती हैं। बहुराष्ट्रीय कम्पनियां

(एम एन सी) को भारत में काम करने से रोकने वाले जितने भी प्रतिबंध थे, उन सबको हटा दिया गया है। भारतीय कम्पनियां भी विदेशी कम्पनियाँ के साथ मिलकर अपने देश में भी काम कर सकती है और संयुक्त रूप से अन्य देशों में भी काम कर सकती हैं। भारत में 1991 में वैश्वीकरण के लिए मन बना लिया था और अपनी अर्थव्यवस्था को बाहरी निवेश के लिए खोल दिया था। इसके लिए आयात शुल्क तथा अन्य शुल्क हटा दिये गये थे।

वैश्वीकरण ने आधुनिक जीवन के हर पहलू को प्रभावित किया है तथा वैश्विक अर्थव्यवस्था को एक बड़ी शक्ति के रूप में उभरने में सहयोग दिया है।

यद्यपि वैश्वीकरण की कुछ कमजोरियां भी हैं, परन्तु फिर भी दुनिया भर के अधिकतर अर्थशास्त्री यही मानते हैं कि वैश्वीकरण विश्व अर्थव्यवस्था के लिए अत्यधिक लाभकारी है। अतीत में अनेक दौर ऐसे आये हैं जब दुनिया के अनेक देशों ने अपनी अर्थव्यवस्था को आर्थिक सुरक्षा की दृष्टि से राष्ट्रीय सीमाओं में बाँधकर रखने के प्रयास किये हैं। परन्तु यह सच है कि दुनिया के सभी देशों की आर्थिक समृद्धि के लिए वैश्वीकरण का व्यापक स्तर पर स्वीकारा जाना जरूरी है।

13.8 संदर्भ

के. रोबार्ट, शेफर, अंडरस्टेंडिंग ग्लोबलाइज़ेशन : द सोशल को सेक्वेंसेज ऑफ पॉलिटिकल, इकोनोमिक एण्ड एंवायरनमेंटल चेंज, फिफ्थ एडीशन।

ल्यूक मार्टेल, द सोसाइटी ऑफ ग्लोबलाइज़ेशन : फर्स्ट एडीशन।

राम आहूजा, कंटेम्परारी इस्यूज़ इन ग्लोबलाइज़ेशन : एन इंट्रोडक्शन टू थ्यौरी एण्ड पॉलिसी इन इंडिया, पेपर बैक – 28 अप्रैल, 2006।

राम आहूजा, सोशल प्रोब्लम्स इन इंडिया, पेपर बैक– 1992।

जे वाइल्ड जॉन एंड एल वाइल्ड केनेट, इंटरनेशलन बिजनेस : द चलेंजेज ऑफ ग्लोबाइजेशन : 26 मार्च, 2016।

द ग्लोबलाइजेशन वेबसाइट –http://www.sociology.emory.edu/ globalization /index. html

13.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) वैश्वीकरण सामाजिक परिवर्तन की एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा दुनिया और उसके देश व्यापार वाणिज्य, वैज्ञानिक खोजें, वैचारिक आदान–प्रदान तथा सामाजिक सम्पर्क आदि के माध्यम से एक दूसरे से जुड़ जाते हैं।

2) वैश्वीकरण के प्रमुख प्रभाव इस प्रकार हैं :

i) आर्थिक – अर्थव्यवस्थाएं तथा समाज उदार हो जाते हैं।

ii) राजनैतिक रूप से यह राष्ट्र–राज्य के महत्व को घटा देता है।

iii) गैर सरकारी संस्थानों (एन जी ओ) का प्रभाव बढ़ जाता है – मानवतावादी सहयोग तथा विकास गतिविधियों के मामले में।

3) असत्य

बोध प्रश्न 2

1) **अच्छाइयां :–**

- विकसित देशों की ओर से विकासशील देशों में निवेश का प्रवाह बढ़ जाता है।
- सूचनाओं तथा ज्ञान का आदान–प्रदान बढ़ जाता है।

बुराइयां :–

- आउटसोसिंग के कारण विकसित देशों तथा विकासशील देशों में नौकरियां घट जाती हैं।
- पर्यावरण प्रभावित होता है और पूरी दुनिया में प्रदूषण बढ़ जाता है।

2) अ) मन्द या धीरे

ब) महामारियां

स) आतंकवाद

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

शब्दावली

झुंड (Band) : शिकार करने वाले तथा भोजन सामग्री एकत्रित करने वाले समाज का छोटा समूह।

पूंजीपति (Capitalist) : उत्पादन के संसाधनों पर स्वामित्व रखने वाला तथा नियंत्रित करने वाला प्रभुत्व वर्ग।

कमोडिटी मनी (Commodity money) : हर वस्तु का अपना मूल्य होता है जो वस्तु विनिमय के समय विनिमय का आधार तय करता है।

प्रतिस्पर्धा (Competition) : लाभार्थियों के बीच लाभ प्राप्ति के लिए होने वाला संघर्ष।

तानाशाही (Dictatorship) : दूसरों पर शासन करने की संपूर्ण शक्ति जिसे स्वीकारना ही पड़ता है।

वितरण न्याय (Distributive Justice) : वस्तुओं तथा सेवाओं की समान अथवा वितरण प्रक्रिया।

श्रम–विभाजन (Division of Labour) : श्रमिकों व कर्मचारियों को योग्यतानुसार काम का विभाजन।

घरेलू (Domestic) : भौतिक या अभौतिक वह वस्तु जो परिवार या घरेलू स्तर पर प्राप्त हो।

प्रवर्तन (Enforcement) : किसी काम को करने के लिए दबाव बनाने की प्रक्रिया।

नृजातिय केंद्रित (Ethnocentric) : अपने समूह को सर्वोच्च मानने की दृढ़ता।

विनिमय (Exchange) : लोगों के बीच चीजों की अदला–बदली या चीजों का पहुँचाया जाना।

पारिवारिक श्रम (Family Labour) : जब किसी काम को केवल परिवार के सदस्यों के सामूहिक परिश्रम से पूरा किया जाय।

खेत (Farmland) : कृषि कार्य के इस्तेमाल की जाने वाली भूमि।

उत्पादन शक्तियां (Forces of Production) : श्रम शक्ति व मशीनों आदि का उत्पादन के लिए इस्तेमाल के लिए जरूरी है।

उपहार (Gift) : मूर्त व अमूर्त वस्तुएँ जो दूसरों को बिना किसी बदले में प्राप्ति के दी जाती है।

सकल राष्ट्रीय उत्पाद (Gross National Product (GNP) :

अर्थव्यवस्था के तहत वस्तुओं व सेवाओं का राष्ट्रीय स्तर पर एक अवधि विशेष में कुल उत्पादन किया जाना।

मुखिया या प्रमुख (Headman) : शिकार करने वाले तथा भोजन सामग्री एकत्रित करने वाले समाजों में विशिष्ट अधिकार प्राप्त व्यक्ति जो समाज या जन–समूह का नियंत्रण करता हे।

बागवानी (Horticulturalist) : एक व्यक्ति जो अनेक प्रकार के पेड़–पौधों को लगाता है तथा उनकी देखभाल करता है।

शिकार करना व भोजन एकत्र करना (Hunting and gathering) : एक खास तरह का समाज जो शिकार करके तथा भोजन सामग्री एकत्रित करके अपनी जीवन–यापन करता था।

असमानता (Inequality) : पूंजीवादी समाज में दो वर्गों के बीच आय का अंतर।

नातेदारी (Kinship) : विभिन्न लोगों के बीच नातेदारी पर आधारित संबंधित समूह।

वैधानिक (Legitimate) : सब पर लागू होने वाले कानूनी नियंत्रण।

विनिमय के माध्यम (Medium of Exchange) : सेवाओं या चीजों के बदले में दी जाने वाली चीजें।

उत्पादन पद्धति (Mode of Production) : उत्पादन के संबंधों तथा उत्पादन की शक्तियों के बीच संबंध एक विधि जिसमें प्रौद्योगिकी के सहयोग से मानव श्रम को ऊर्जा में बदला जाता है।

वैधानिक मुद्रा (Money) : किसी देश की तथा विनिमय का माध्यम जो वस्तुओं की कीमत निर्धारण प्रक्रिया से जुड़ा है।

आंदोलन (Movement) : कुछ मांगों को लेकर किया गया प्रदर्शन।

प्राकृतिक संसाधन (Natural resources) : प्राकृतिक पर्यावरण से संबंधित उपलब्ध संसाधसन जैसे खाद्य पदार्थ।

घूमंतू (Nomads) : भोजन की तलाश में जगह–जगह घूमने वाले लोग समूह।

सब्जी उत्पादन (Olericulture) : बागवानी जिसमें सब्जियों उगाने वाली खेती की जाती है।

सजावटी (Ornamental) : साज–सज्जा से जुड़ी चीजों की खेती।

कागज–मुद्रा (Paper Money) : कागज की बनी मुद्रा जिसका अपना कोई मूल्य नहीं होता।

पशुपालक (Pastoralist) : पशुपालने व चराने का काम करने वाले।

कृषक अर्थव्यवस्था (Peasant Economy)	:	एक तरह की ग्रामीण अर्थव्यवस्था जो कृषि उत्पादों का योगदान हो।
किसान/कृषक (Peasant)	:	एक व्यक्ति जो खेती में पैदावार करके जीवन यापन करता है।
नियोजित समाजवाद (Planned Socialism)	:	उत्पादन और वितरण को केंद्र में रखते हुए सामाजिक हित की योजनाएं तैयार किया जाना।
फल–उत्पादन (Pomology)	:	फलों की खेती करना।
मूल्य तंत्र (Price mechanism)	:	मांग और पूर्ति के आधार पर वस्तुओं की कीमतें तय करना।
पारस्परिकता (Reciprocity)	:	संबंधों के आधार पर चीजों का विनिमय।
उत्पादन संबंध (Relations of Production)	:	उत्पादन प्रक्रिया में संबंधों का विकसित होना, जैसे स्वामी और श्रमिक के बीच संबंधों का निर्माण।
क्रांति (Revolution)	:	सामाजिक परिवर्तन द्वारा प्रगति के प्रयास।
समाजवादी समाज (Socialist Society)	:	समानता, न्याय तथा सहयोग तथा सबके हित के विचारों को आधार मानकर काम करने वाला समाज।
राज्य–समाजवाद (State Socialism)	:	पूंजीवाद को समाप्त करने के लिए सरकार या राज्य द्वारा किए जाने वाले प्रयास।
मौसमी पशुचारण (Transhumant)	:	पशुपालको को किराये पर रखकर पशुओं को ऋतुओं के आधार पर पशुपालन करवाना।
वेल्यू लेडन (Value-laden)	:	कीमत आधारित अच्छी या बुरी, अपेक्षित या अनअपेक्षित कीमत निर्धारण।
निष्पक्षता (Value-neutral)	:	निष्पक्ष रूप से हस्तक्षेप करना।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

जे. ब्राऊन (1970). ए नोट ऑन द डिविजन ऑफ लेबर बाई सैक्स : अमेरिकन एंथ्रोपॉलोजिस्ट, 72 : 1073–1078.

ए. वी. चैनोव (1966). द थ्यौरी ऑफ पीजेंट इकोनॉमी. द अमेरिकन इकोनॉमिक एसोसियेशन।

डी. एन. धनाग्रे (1983). पीजेंट मूवमेंट इन इंडिया, 1920–1950. ओक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस.

एफ. ऐलिस (1988). मोड ऑफ प्राडक्शन इन जॉन ईटवैल. मुर्रे मिलगेट एण्ड पीटर न्यूमेन (एड्स) मेक्जीमम इकॉनोमिक्स (289–296). न्यूयार्कः नोरटन प्रैस।

के. कारंती (2014). द स्ट्रक्चर ऑफ वर्ल्ड हिस्ट्री : फ्रॉम मोड ऑफ प्राडक्शन टू मोड्स ऑफ एक्सचेंज. दुरहमः ड्यूक यूनीवर्सिटी प्रैस।

ए. एल. क्रोएबर (1948), एंथ्रोपोलॉजी. न्यूयार्कः हरकोर्ट।

ई. लीकॉक एण्ड एच साफा (1986). वूमन्स वर्क : डेवलपमेंट एण्ड द डिवीजन ऑफ वर्क बाइ जेंडर. साउथ हेडलीः बर्गिन एण्ड गार्वे.

सी. मीलासॉक्स, (1981). मेडिन्स मील एण्ड मनी : केपिटलिज़्म एण्ड द डॉमेस्टिक कम्युनिटी. कैम्ब्रिज।

जी. पी. मुर्डोक एण्ड सी. प्रोवोस्ट (1973). फेक्टर्स ऑफ डिवीजन ऑफ लेबर बाई सैक्स : ए क्रॉस कल्चरल एनेलाइसीस. एथनोलॉजी, 12:203–225।

आर. एम. रोजेन्सविग (2012). मेटिरियेलिज्म, मोड ऑफ प्राडक्शन एण्ड ए मिलेनियम ऑफ चेंज इन साउदर्न मेक्सिको. जर्नल ऑफ आरचियोलॉजिकल मैथड एण्ड थ्यौरी, 19 : 1–48।

एम. साहलिन्स (1972). स्टोन एज इकॉनोमिक्स. एल्डीन, शिकागो।

सी. जेम्स स्कॉट (1976). द मोरल इकॉनामी ऑफ पीजेंट : रिबेलियन एण्ड सब्सिंस्टेंस इन साउथईस्ट एशिया. येल यूनीवर्सिटी प्रैस.

ए. एन. सेठ (1984). पीजेंट ऑर्गेनाइजेशन इन इंडिया. दिल्लीः बी. आर. पब्लिशिंग कॉर्पोरेशन।

जे. स्मेल्सर नील एण्ड आर. स्वेदबर्ग (एड) (2005). हेंडबुक ऑफ इकॉनोमिक सोश्योलॉजी. प्रींसटेन यूनिवर्सिटी प्रैस, जर्सी।

डी. थोर्नर (1966). चैनोवेस कंसैप्ट ऑफ पीजेंट इकोनॉमी इन डी. थॉर्नर एट एल (एड्स), ए. बी. चैनोवेस ऑन द थ्यौरी ऑफ पीजेंट इकॉनोमी, (XI-XXIII), आई एल होमवूड : द अमेरिकन इकॉनोमिक एसोसियेशन।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY